''छोटानागपुर क्षेत्र के वृहत पाषाणिक संस्कृति का पुरातात्विक अध्ययन''

इतिहास विषय में एम0 फिल0 उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय

शोधार्थी

नीरज कुमार

नामांकन संख्या 1234/19

शोध निर्देशक

डॉ0 सिद्धार्थ शंकर राय

असिस्टेन्ट प्रोफेसर

इतिहास विभाग

अम्बेडकर स्कूल फॉर सोशल सांइसेस

बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय

(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

विद्या विहार, रायबरेली रोड़ लखनऊ–226025 उ0प्र0

2021

माता–पिता एवं गुरूजनों के चरणों में समर्पित

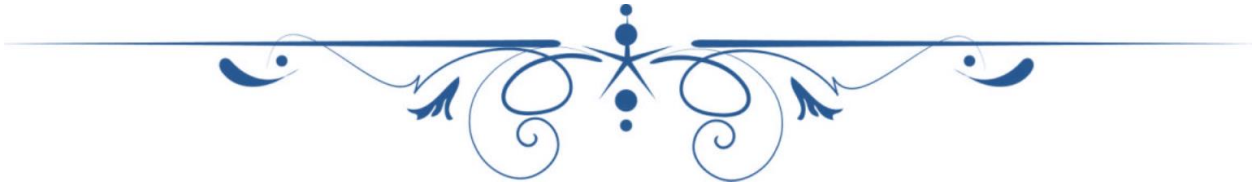

घोषणा पत्र

मैं **नीरज कुमार** एम0 फिल0 (इतिहास विभाग), अम्बेडकर स्कूल फॉर सोशल साइंसेस, बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ का छात्र यह घोषणा करता हूँ कि प्रस्तुत शोध–निबंध'' **छोटानागपुर क्षेत्र के वृहत पाषाणिक संस्कृति का पुरातात्विक अध्ययन**'' शोध निर्देशक **डॉ0 सिद्धार्थ शंकर राय** के अंतर्गत मेरे द्वारा किये गये प्रयासों का प्रतिफल है तथा मेरे द्वारा स्वयं इस शोध प्रबंध को पूर्ण किया गया है।

मैं सहृदय स्वीकार करता हूँ कि जहाँ भी संबंधित पुस्तकों, पत्रिकाओं, शोध प्रबंध, तथा लेखों इत्यादि से उपलब्ध सामग्री का शोध निबंध के मूल विवेचन के कम मे उपयोग किया गया है वहाँ उन स्रोतों का उल्लेख किया गया है। यह शोध अन्य संस्था या किसी जगह प्रकाशित नहीं हुआ है। यह मेरे द्वारा पूर्ण किया गया शोध कार्य मौलिक एवं सर्वथा नवीन है।

Neeraj Kumar
06/04/2021

शोध–छात्र

नीरज कुमार

इतिहास विभाग

बीबीएयू लखनऊ

Certificate

This is to certify that the M. Phil. Dissertation titled "छोटानागपुर क्षेत्र के वृहत पाषाणिक संस्कृति का पुरातात्विक अध्ययन" submitted by **Mr. Neeraj Kumar**, Enrolment No. 1234/19, is an original research work and has not been previously submitted in part or full for the award of any other degree or diploma to this or any other university.

The M. Phil. dissertation submitted to Babasaheb Bhimrao Ambedkar University Lucknow, satisfies all the requirements as stipulated in the *Master of Philosophy (M. Phil.)/ Doctor of Philosophy (Ph.D.) Regulations (amended in 2019)* and it is fit for submission and evaluation for the award of the degree of Master of Philosophy (M. Phil.) of the University.

Date: 06/04/21

Prof. S. Victor Babu
Head of Department
Department of History
BBAU, Lucknow

Dr. Sidharth Shankar Rai
Supervisor
Department of History
BBAU, Lucknow

आभार–पत्र

मैं अपने एम0 फिल0 शोध कार्य के लिए सर्वप्रथम डॉ0 सिद्धार्थ शंकर राय (शोध पर्यवेक्षक) के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। शोध पर्यवेक्षक के रूप में जिस प्रकार से पूरे शोधकार्य के दौरान डॉ0 सिद्धार्थ शंकर राय सर ने जितना मार्गदर्शन और स्नेह दिया, वह मेरे लिए अत्यन्त विशिष्ट महत्व रखता है। मुझे शोधार्थी के रूप में सर ने अपना सानिध्य प्रदान किया। इस महती कृपा के लिए अत्यन्त हृदय से आजीवन अभारी रहूँगा। मैं सर के प्रति शीश झुका कर अपना वंदन अर्पित करता हूँ।

इसके अतिरिक्त विभाग के विभागाध्यक्ष महोदय प्रो0 एस0 विक्टर बाबू सर का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है, इस मार्गदर्शन के लिए मैं सर को अत्यन्त अभारी हूँ। साथ ही प्रो0 सूरा दारापुरी मैम ने कोर्सवर्क के दौरान रिसर्च संबंधी जो अनुभव साझा किया। इस अनुकंपा के लिए उन पर मैं अपना अभार प्रकट करता हूँ। डा0वी0एम0 अत्यन्त विशिष्ट योगदान है। शोध कार्य के प्रारम्भिक समय में कोर्सवर्क के दौरान, शोध बताकर मेरे ज्ञान में संवृद्धि की। अतः मैं सर का अत्यन्त आभारी हूँ। डॉ0 रेणु पाण्डेय मैम का भी मैं अत्यन्त आभारी हूँ।

शोध कार्य में सहपाठियों के योगदान को कम नहीं ऑका जा सकता, जिनके सिखने की जिजिविषा मुझे अत्यन्त लाभ मिला है। इस कड़ी में मैं रोहित कुमार सिंह (एम0ए0 सहपाठी), शुभम् कुमार यादव, ओवैस इस्माइल, अखिलेश कुमार, चेऊरी सतीश, रोहित कुमार, शीतल कुमारी, प्रेरणा राय, कौश्लया कुमारी इत्यादि सहपाठियों का अत्यन्त आभारी हूँ।

मैं मुकेश चंद्रा एवं अरविंद स्वरूप तथा अन्य सीनियर शोधार्थियों का भी आभारी हूँ, जिन्होंने हर समय शोधकार्य के दौरान होने वाले चुनौतियों के प्रति जागरूक किया।

मैं विभाग के कर्मचारीगण नीरज कुमार एवं सतीश भईया का भी आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होनें विभाग से संबंधित आवश्यक जानकारी को हम तक पहुँचाया। मेरे मास्टर डिग्री के दौरान शोधकार्य की नींव रखने वाले डॉ0 अशोक मण्डल (विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग विनोवाभावे विश्वविद्यालय) के प्रति अपना वंदन प्रकट करता हूँ, जिन्होंने शोधकार्य के दौरान आधारभूत गलतियों का सुधार किया। श्री ब्रजभूषण शर्मा सर को नमन करता हूँ, जिनके बिना

मेरी शायद प्रारम्भिक शिक्षा ही अधूरी रह जाती है, जिनके विश्वास और धैर्य ने मेरे आधारभूत व आरम्भिक शिक्षा को सुदृढ़ता प्रदान की, जो मेरे समस्त विकास में आपका उल्लेखनीय योगदान है, मैं आपके प्रति भी अत्यन्त आभारत करता हूँ। साथ ही उन सभी शिक्षकों का महत्व भी अत्यन्त उल्लेखनीय है, जिनका समय–समय पर मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। मैं अपने सभी शिक्षकों का शीश झुका कर नमन करता हूँ।

शोध कार्य को संपादित करने में मेरे पूरे परिवार का अथक योगदान रहा है, जिसे शब्दों में उल्लेख करना अत्यन्त न्यून है। रेणू देवी (मॉ), दीनानाथ साह (पिता जी) को प्रति श्रद्धा सुमन अर्पित करता हूँ, जिन्होंने हर क्षण मेरे सफलता के लिए अपनी समस्त जीवन को न्यौछावर कर दिया।

सीमा देवी (ज्येष्ठ मॉ) एवं अमरनाथ साह (ज्येष्ठ पिता जी), जिनका योगदान पूरे परिवार में अभिभावक की तरह रहा है, जिनके योगदान से मेरी पारिवारिक जिम्मेदारी सदैव अल्प रही है। निधि कुमार (बहन), जिसने सदैव मुझे मानसिक बल प्रदान किया एवं धीरज कुमार (कनिष्क भ्राता), जिसके बिना मेरा प्रत्येक कार्य अधूरा रहा जाता है। छोटा भाई होते हुए भी एक विशेष मित्र की भॉति मेरे हर छोटी–बड़ी जरूरतों का ख्याल रखा। मैं दिल की गहराइयों से समस्त परिवारजनों के प्रति अपना वंदन प्रकट करता हूँ। साथ ही द्वारिका नाथ साह (ज्येष्ठ पिता जी) एवं सीता देवी (ज्येष्ठ मॉ) का भी अत्यन्त अभारी हूँ, जिन्होंने मेरे अनुपस्थिति में ज्येष्ठ अभिभावक की भूमिका निभा कर हमारे समस्त परिवार का पूर्णतः ख्याल रखा।

अंत मैं उन सभी लोगों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनके कारण मेरे काय को नवआयाम प्रदान करने में अप्रत्यक्ष रूप से भी सहायता मिली। अंततः मॉ शारदा एवं परम् पिता परमेश्वर को शीश झुका कर अपना अपार श्रद्धा व भक्ति अर्पित करता हूँ। जो मेरे समस्त ऊर्जा का स्रोत है।

अनुक्रमणिका

क्रम.सं0	विवरण	पेज नं0
1.	**अध्याय–प्रथम : प्रस्तावना** • गर्त शवाधान • सिस्ट • डोलमेनॉयड–सिस्ट • केयर्न वृत • टोपीकल • कुड़ईकल • गुफा समाधि • अस्थि–कलश • मेंनिहिर • सामूहिक मेनिहिर	1–24
	अध्याय–द्वितीय : शोध प्रविधि एवं शोध क्षेत्र (छोटा नागपुर पठार की भौगोलिक संरचना) ❖ **शोध प्रविधि** • परिकल्प–निग्मनात्मक विधि • मध्य श्रेणी सिद्धांत • ऐतिहासिक अनुसंधान विधि ❖ **शोध क्षेत्र** • छोटा नागपुर पठार की भौगोलिक संरचना • ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं नामकरण • छोटानागपुर पठार का भू–तात्विक निर्माण • छोटानागपुर पठार का विभाजन • नदी, झरना व जलप्रपात • विभाजित पठारी क्षेत्र – (आधार भू–गर्भिय विशेषता) • उत्तरी छोटानागपुर के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र • दक्षिणी छोटानागपुर के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र • वन संपदा और परिस्थितिकी • छोटानागपुर में खनिज संसाधन • छोटानागपुर क्षेत्र की जनसंख्या	25–54 25–30 30–54

3.	**अध्याय–तृतीय : छोटानागपुर क्षेत्र की महापाषाणिक संस्कृति**	**55–83**
	❖ **हजारीबाग जिले से सम्बन्धित महापाषाणिक स्थल** • पंकरी बरवाडीह • बाना दाग • लोहसिंघना • जबरा	58–60
	❖ **रामगढ़ जिले से संबंधित महापाषाणिक स्थल** • नापो • हुहुआ	61–62
	❖ **राँची जिले से संबंधित महापाषाणिक स्थल** • नगड़ी, नगड़ी 1, नगड़ी 11, तमाड़–I, तमाड़–II, तमाड़–III, चोका हातू, दूलमी , तेतला, बलुआडीह–1, मरिचाडीह, जेथाडीह	62–67
	❖ **खूंटी जिला से संबंधित महापाषाणिक स्थल** • कामरा, नोआटोली, बालो–1, बालों, चाारिद, किताहातू, सोदाक	68–83
4.	**अध्याय–चतुर्थ : मिथक, परम्परायें एवं सामाजिक संस्कृति**	**84–110**
	❖ **मिथक**	84–89
	❖ **महापाषाण परम्परा** • डोलमेन • क्षैतिज स्लैब (शासनदीरी) • मेनिहिर (बीरीदीरी) • मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब • मेनिहिर के साथ डोलमेन • स्टोन सर्कल	89–97
	❖ **पारंपरिक हड़गड़ी अनुष्ठान**	97–110
5.	**अध्याय–पंचम : उपसंहार**	**111–117**
6.	**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**	**i-iv**

चित्र–सूची

पृष्ठ नं0

- सभी प्रकार के महापाषाणिक समाधियों का चित्रांकन.....16
- छोटानागपुर क्षेत्र का भौगोलिक नक्शा.....31
- भारत के सन्दर्भ में पठारी क्षेत्रों का भौगोलिक विवरण.....36
- उच्चावच से संबंधित क्षेत्र के ऊँचाई का उल्लेख.....40
- छोटानागपुर क्षेत्र से सम्बन्धित भौगोलिक राज्य.....44
- हजारी बाग जिले से प्राप्त महापाषाणिक शवाधान के साक्ष्य.....71
- रामगढ़ जिले से प्राप्त महापाषाणिक शवाधान के साक्ष्य.....72
- राँची जिले से प्राप्त महापाषाणिक शवाधान के साक्ष्य.....73–75
- खूँटी जिले से प्राप्त महापाषाणिक शवाधान के साक्ष्य.....76
- सर्वेक्षण कार्य के दौरान किये गये महापाषाणिक स्थलों का अवलोकन.....77–83
- अप्राकृतिक मृत्यु से जुड़े महापाषाणिक समाधि, किताहातू (खूँटी जिला).....100
- उराँव जनजातियों की क्षैतिज महापाषाणिक समाधि (अप्राकृतिक मृत्यु से सम्बन्धित)...101
- महापाषाणिक समाधियों में कपमार्क्स के प्रमाण, स्थान– बालो, नापो एवं चोकाहातू.....102
- डोलमेन प्रकार के महापाषाणिक पत्थर, तमाड़ (राँची जिला).....103
- क्षैतिज स्लैब प्रकार के महापाषाणिक समाधि, तेतला, तमाड़ एवं चोकाहोतू (राँची जिला).....104
- मेनिहिर (बीरीदीरी) प्रकार के महापाषाणिक समाधि, बलुआडीह, हहुआ एवं पंकरी बरवाडीह.....105
- सामूहिक मेनिहिर प्रकार के महापाषाणिक समाधि, कामरा एवं बालो, (खूँटी जिला).....106
- मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब, प्रकार के महापाषाणिक समाधि, तमाड़.....107
- मेनिहिर के साथ डोलमेन प्रकार के महापाषाणिक समाधि, खूँटी जिला.....108
- स्टोन सर्कल प्रकार के महापाषाणिक समाधि, नगड़ी, राँची जिला.....109
- सामूहिक मेनिहिर सड़क के दोनों ओर व पाहन से संबंधित प्रकार के महापाषाणिक समाधि, बालो, खूँटी जिला।.....110

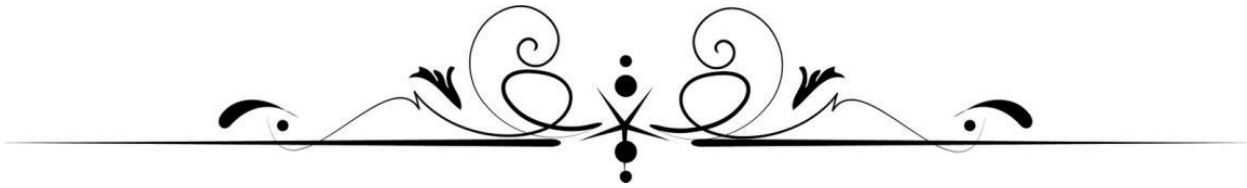

अध्याय–प्रथम

प्रस्तावना

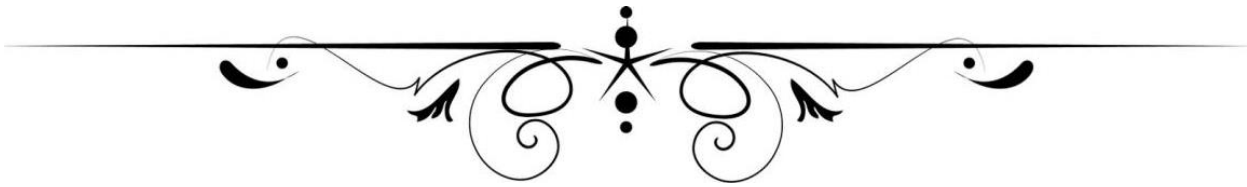

अध्याय–प्रथम

प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय इतिहास की एक ऐसी संस्कृति जिसका संबंध मूलतः शवाधान परंपरा व दफनाने की पद्धति के साथ है। इसके अर्न्तगत व्यापक तौर समग्र रूप से बड़े–बड़े पाषाणों का प्रयोग स्मृति–प्रतीक के रूप में प्रयोग किया गया, जिसे 'महापाषाणिक संस्कृति' कहा गया। महापाषाणिक संस्कृति से संबंधित भौतिक साक्ष्यों के पुरातात्विक अध्ययन से प्राचीन भारत की संस्कृति को जानने करने के लिए अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई है। महापाषाण परंपरा विशेष तौर पर मृतक संस्कार से जुड़ी हुई है, जिसमें कब्रगाह में, किसी अवासीय स्थल या गैर–आवासीय स्थल पर मृतक मनुष्य को दफनाने की परंपरा हैं। मृतक मनुष्य को दफनाने हेतु प्रायः 'प्राथमिक शवाधान पद्धति (जिसमें मृतक के पूरे शरीर को दफनाया जाता है।) या द्वितीयक शवाधान पद्धति (जिसमें मृतक के कुछ हड्डियों को एक मिट्टी के बर्तन में रखकर दफनाया जाता है।) का प्रयोग किया जाता था। नवपाषाण काल से ही मनुष्य जीवन व मृत्यु संबंधी अवधारणा से अवगत हो चुका था और नवपाषाण काल से ही मृतको को दफनाने की परंपरा का प्रचलन के प्रमाण बुर्जहोम, गुफ्कराल व बलुचिस्तान इत्यादि नवपाषाणिक क्षेत्रों से प्राप्त होते हैं। लेकिन व्यापक तौर पर मृतको को या मृतको की अस्थियों को दफनाने के एक ही प्रकार के समान व विशिष्ट परंपरा का प्रमाण महापाषाण संस्कृति के तौर पर प्राप्त होता हैं। जिसके अंतर्गत महापाषाण कब्रगाहों से दक्षिण भारत में लौह व कृष्ण–लोहित मृदभांड का व्यापक प्रयोग किया गया था। विंध्य व विदर्भ क्षेत्रों से ताम्र धातु से बने उपकरण भी प्राप्त होते हैं। लौह प्रयोग, कृष्ण–लोहित मृदभंड (BRW) व दफनाने की परंपरा के साथ–साथ स्मृति–प्रतीक के रूप में स्थापित बड़े पत्थरों की साझी व समिश्रित संस्कृति महापाषाणिक संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है।

महापाषाणिक शब्द अंग्रेजी भाषा के 'मेगालिथ' शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। मेगालिथ शब्द की व्युत्पत्ति यूनानी भाषा के 'मेगॉस' (Megas) और 'लिथॉस' (Lithos)

इन दोनों शब्दों के संयोग से हुई है। विशाल एवं अनगढ़ प्रस्तर–खण्डों से निर्मित स्मारकों के लिए पश्चिमी और उत्तरी यूरोप में 'मेगालिथ' शब्द का प्रयोग सन् 1840 तथा 1860 के आस–पास होने लगा था। वी0 गार्डेन चाइल्ड ने वृहतपाषाणिक स्मारकों की संरचना को उदिष्ट कर लिखा है कि ''ये किसी अंधविश्वास सम्बन्धी अनुष्ठाानिक अथवा धार्मिक उद्देश्य से बनाये जाते थे। विशिष्ट प्रकार के इन स्मारकों का निर्माण या तो शव को दफनाने के लिए अथवा मृत व्यक्ति की स्मृति को बनाये रखने के लिए किया जाता था। मार्टीमर व्हीलर के अनुसार 'मेगालिथ प्रायः विशाल, अनगढ़ पाषाण–खण्डों से निर्मित उन स्मारकों को कहा जाता है जिनका मृतकों को दफनाने के लिए अथवा मृतको के स्मारक के रूप में निर्माण किया जाता रहा हो (पाण्डेय, 2015)। इस प्रकार वे स्मारक अंतिम संस्कार से संबंधित समाधीकरण, दाह–संस्कार स्मारक या किसी धार्मिक परंपरा से संबंद्ध माने जा सकते है।

कालक्रम की दृष्टि से नवपाषाण काल के बाद महापाषाण काल का प्रारम्भ होता है। कई महापाषाणिक स्थल पूर्व–लौह युग से संबंधित है, जिनमें विंध्य, विदर्भ व दक्षिण भारत के हल्लूर, टेक्कलकोटा, मास्की इत्यादि महत्वपूर्ण महापाषाणिक स्थल है। किन्तु महापाषाणिक शवाधानों से प्राप्त लोहे के व्यापक प्रमाण से पुरात्वविदो ने महापाषाणिक संस्कृति को लौह युगीन संस्कृति से जोड़ा है। वस्तुतः महापाषाणिक संस्कृति को एक स्वतंत्र संस्कृति न मानकर, इसका संबंध लौह युग में मृतको को दफनायें जाने की शैली से है। विंध्य व विदर्भ के महापाषाणिक संस्कृति की आरंभिक अनुमानित तिथि 'पूर्व लौहयुगीन' अथवा नवपाषणिक युगीन संस्कृति से जोड़ कर देखा गया है। विंध्य के बेलन नदी की घाटी में स्थित कोटिया जहॉ के महापाषाणिक कब्रों से लोहे के प्रमाण प्राप्त होते है। कोटिया को छोड़कर ज्यादातर विंध्य के महापाषाणिक स्थल (काकोरिया, बांदा मिर्जापुर) ताम्रपाषाण युगीन से संबंधित हैं। दक्षिण भारत के भी नवपाषाण–ताम्रपाषणिक संस्कृति से संबंधित स्थल संगनकल्लु, ब्रह्मगिरि, पिक्कलीहल इत्यादि क्षेत्रों से महापाषाणिक शवाधान के प्रमाण मिलते हैं। (सिंह, 2017) हल्लूर से नवापाषाण और महापाषाण युग के प्रमाण प्राप्त होते हैं। थर्मोल्यूमिनी विधि के आधार

पर 1320 ईसा पूर्व महापाषाण का काल (के0पी0 राव द्वारा) माना गया हैं। रेडियोकार्बन विधि (c-14) के आधार पर ही के0पी0 राव महोदय ने एक अन्य महापाषाणिक स्थल टेक्कलकोटा (कर्नाटक) का तिथि निर्धारण 555 ई0 पूर्व निर्धारित किया। (राव, 2006) विभिन्न विद्वानों ने भिन्न–भिन्न महापाषाणिक स्थल से प्राप्त भौतिक साक्ष्य के आधार पर कालानुक्रम निर्धारित किया हैं। के0पी0 राव ने उदाहरण के साथ महापाषाणिक संस्कृति का कालनुक्रम तिथि 1400 ईसा पूर्व से 200 ईसा पूर्व के मध्य निर्धारित किया हैं। ए0डी0 सुंदर महोदय (1975) ने कोन्नूर नामक महापाषाणिक स्थल का तिथि क्रम 1200 ईसा पूर्व निर्धारित किया है। (राव, 2006 : 421–23)

यद्यपि महापाषाणिक संस्कृति का आरम्भिक कालानुक्रम प्रागैतिहासिक काल के नवपाषाण युग के पश्चात् से प्रारम्भ होती हैं। तथापि दक्षिण भारत के ज्यादातर महापाषाणिक स्थल लौहयुग का प्रतिनिधित्व करती हैं। दक्षिण भारत के महापाषाणिक स्थलों से प्राप्त भौतिक अवशेष (उत्खनन के आधार पर) के पुरातात्विक अध्ययन से ज्ञात होता है कि उतनूर, बह्मगिरि, टेक्कलघाट इत्यादि महापाषाणिक स्थलों का संबंध नवपाषाण–ताम्रपाषाण युग से भी संबंध रहा है। (सिंह, 2017)

हल्लूर (कर्नाटक) नामक महापाषाणिक स्थल का संबंध संभवतः पूर्व लौह युग से था। विदर्भ के महापाषाणिक स्थलों का अध्ययन करने वाले एस.वी.देव (1970) के.पी. राव (1988) इतयादि महत्वपूर्ण इतिहासकारों ने विदर्भ के महापाषाणिक स्थलों का संबंध ताम्रपाषाण युग से संदर्भित किया। विदर्भ के महापाषाणिक संस्कृति के संस्कृति के ऊपर जोर्वे संस्कृति के प्रभाव को इंकार नहीं किया जा सकता। दायमाबाद, इनामगॉव इत्यादि पूर्व–महापाषाणिक संस्कृति का संबंध पूर्णतः ताम्रपाषाण युग से है, किन्तु इनामगॉव से बच्चों को अस्थिकलश में कुछ ताम्र वस्तुओं के साथ दफनाये जाने के प्रमाण प्राप्त होते हैं। महाराष्ट्र के ही जूनापानी, नैकुण्ड व बंडगॉव इत्यादि महापाषाणिक स्थल है जहॉ से ताम्र वस्तुओं की प्राप्ति हुई है। (एस.वी.देव, 1970)

जहॉ एक ओर दक्षिण भारत की महापाषाणिक संस्कृति तिथि क्रमानुसार 1440 ईसा पूर्व (कुमार हल्ली) की तिथि थर्मोल्युमिनीसेंस विधि के आधार पर प्राप्त होती है। वही विदर्भ के महापाषाणिक संस्कृति का तिथि 545–505 ईसा पूर्व (नैकुण्ड) के आस–पास रेडियाकार्बन विधि द्वारा निर्धारित किया गया है। वैसे तो उत्तर–हड़प्पा काल व ताम्रपाषाण के पश्चात् उत्तर भारत में लोहे के व्यापक प्रमाण मिलते हैं। हस्तिनापुर, अहिच्छत्र, कोसाम्बी अतिरंजी खेड़ा, तक्षशिला इत्यादि उत्तर भारत के वे पुरातात्विक स्थल है जहॉ से लोहे की प्राप्ति तो होती है लेकिन इन स्थलों का संबंध महापाषाणिक संस्कृति से कतई नहीं हैं। महापाषाणिक संस्कृति के अंतर्गत पूरे भारत से लोहे के प्रमाण मिलते है किन्तु दक्षिण भारत से महापाषाणिक कब्रगाहों से लोहे व कृष्णलोहित मृदभांड (BRW) के व्यापक प्रमाण मिलते हैं। वी. सेल्वाकुमार (2003) के अनुसार ''महापाषााण मुख्यतः प्रायद्विपीय भारत में, का संबंध पूर्व–लौह युग व लोहे के व्यापक प्रयोग से हैं, जिसकी विशेषता कृष्ण लोहित मृदभांड है।'' एक अन्य लेख में मोहंता व वी. सेल्वा कुमार के अनुसार ''दक्षिण भारत की महापाषाणिक संस्कृति की सामान्य तिथि 1000 ईसा पूर्व (लौह युग) या इससे भी पूर्व की है जिसकी निरंतरता 500 ईस्वी या कुछ परिदृश्यों में इससे भी आगे की तिथि है।'' (सेल्वा कुमार, 2003)

ध्यातव्य है कि महापाषाणिक संस्कृति से संबंधित विज्ञान व पुरातत्वविद् महापाषाणिक संस्कृति के एक निश्चित कालानुक्रम पर विविध दृष्टिकोण रखते है। इसका मौलिक कारण विविध महापाषाणिक स्थलों के भिन्न–भिन्न भौतिक अवशेषों के आधार पर तिथि निर्धारण करना एक मात्र व्यवस्थित व वैज्ञानिक उपाय पर अध्ययन करना है।

केनेथ केनेडी महोदय ने महापाषाणिक स्थलों से प्राप्त मानव अस्थियों या नर कंकालों के आधार पर तिथि निर्धारण का प्रयास किया (केनेडी, 1975)। एन.आर. बनर्जी महोदय ने अपने लेख अमृतामंगलम् में लिखते है कि ''हालांकि मार्टीमर व्हीलर ने महापाषाणिक संस्कृति की संभावित तिथि 200 ईसा पूर्व से 50 ईस्वी के बीच माना है, लेकिन तत्कालीन अध्ययन महापाषाणिक संस्कृति की आरंभिक तिथि 800 ईसा पूर्व के पीछे तक ले गयी है।'' (बनर्जी, 1969 : 22)

महापाषाणिक संस्कृति से जुड़े अन्य विद्वानों ने भी तिथिक्रम को लेकर भिन्न–भिन्न तर्क प्रस्तुत किया हैं। ए.डी. सुंदर 1975 महोदय ने महापाषाणिक संस्कृति का तिथिक्रम 1100 ईसा पूर्व निर्धारित किया। गार्डेन चाइल्ड महोदय व हेमनड्रॉफ महोदय ने भी महापाषाण की आरम्भिक तिथि 700–400 ईसा पूर्व स्वीकार करते है। (पाण्डेय, 2015)

जी. आर. शर्मा का तर्क है कि विंध्य में महापाषाण की शुरूआत 1800 ईसा पूर्व मे हुई। उत्तर भारत के संदर्भ में ए.के. शर्मा 1991 महोदय ने गुफ्फकराल से प्राप्त महापाषाणिक कब्र की तिथि 200 ईसा पूर्व को इंगित किया। (सेल्वा कुमार, 2003)

वस्तुतः क्षेत्र दर क्षेत्र भौतिक अवशेषों की विविध वैज्ञानिक विश्लेषण को आधार मानकर, विविध विद्वानों व पुरातत्वविदों के तर्क में विविधता दिखाई पड़ती है। लेस्निक (1974), मूर्ति (1994) व राजन (1986) इत्यादि लेखकों ने महापाषाणिक संस्कृति की आरम्भिक कालानुक्रम लौह–पूर्व युग को स्वीकारा (सुड्कया, 2010)। दक्षिण भारत में महापाषाणिक संस्कृति कब तक प्रचलन में रही इसके कोई सटीक जानकारी प्राप्त नहीं होती।

कुछ विद्वानों के अनुसार यह संस्कृति 500 ई0 तक जीवित रही हैं। नागार्जुन व गुरूराज राव (1979) महोदय के अनुसार ''तमिल–ब्राह्मी शिलालेख के टुकड़े, पंचमार्क सिक्के (आहत सिक्के), सन्नूर तमिलनाडु, महापाषाणिक कब्रगाह से प्राप्त रोमन सिक्के–अमरावती आंध्रप्रदेश यह संकेत देते है कि यह दफनाने की प्रथा, कुछ स्थलों में शुरूआती ऐतिहासिक युग के बाद तक प्रचलन में बनी रही।'' (राव, 1989) शवाधान पद्धति से जुड़े संस्कृति की सूचना हमें संगम साहित्य से भी प्राप्त होती है। शिल्पपादिकरम व मणिमैखले से तत्कालीन महापाषाणिक शवाधान पद्धति के प्रमाण मिलते हैं। पुट्टुकोटई नामक साहित्य में 'अस्थि–कलश' में शवों के दफनाने के प्रमाण मिलते हैं। संगम साहित्य की आनुमानित तिथि 300 ईसापूर्व से लेकर 300 ईस्वी की मानी जाती है। (सिंह, 2017)

हालांकि सन् 500 ईस्वी के पश्चात् दक्षिण भारत की महापाषाणिक संस्कृति पूरे तरीके से व्यवहार में लाने की प्रथा पूर्णतयः समाप्त नहीं हुई। दक्षिण भारत के चेंचू, टोडा, काटा, कादीर इत्यादि जनजाति है (राधा देवी, 2016)। जो इस प्रकार के शवधान परंपरा का उपयोग वर्तमान समय में भी करते रहे हैं। लेकिन नवपाषाण–ताम्रपाषाण युग अथवा लौह युग में महापाषाण के प्रकार व दफनाने की विधि संबंधी व्यापक विविधता तब प्रचलन में थी, उसका अत्यन्त सीमित भाग ही दक्षिण भारत की जनजातियों के बीच प्रचलन में हैं। दक्षिण भाारत के अतिरिक्त उत्तर–पूर्व भारत, छोटानागपुर, छत्तीसगढ़ में भी महापाषाणिक शवाधान परंपरा का प्रचलन वर्तमान परिदृश्य में दिखाई देता हैं।

महापाषाणिक संस्कृति से संबंधित कब्रगाहों के प्रकार में भी विविधता परिलक्षित होती हैं। दक्षिण भारत के महापाषाणिक कब्रगाहों के कई विविध प्रकार है व इन प्रकारों को अनेक उप–प्रकारों में विभक्त किया जा सकता है। महापाषाणिक कब्रगाहों के विविध प्रकारों का विश्लेषण का कार्य सर्वप्रथम वी.डी. कृष्णास्वामी (1949) ने अपने लेख ''द क्लासीफिकेशन ऑफ मेगालिथ इन साउथ इंडिया'' में किया। इसके पश्चात् मेगालिथ कब्रगाहों का वर्गीकरण गुरूराजराव (1971), ए.डी. सुंदर (1975), के.पी. राव (1985) और यू.एस. मूर्ति (1989) इत्यादि महापाषाणिक संस्कृति से जुड़े महत्वपूर्ण विद्वानों ने प्रस्तुत किया।

वी. सेल्वाकुमार (2003), ने महापाषाणिक कब्रगाहों को बिल्कुल सटीकता से वर्गीकरण कर पाने या बता पाने को अत्यन्त चुनौतीपूर्ण माना है। क्षेत्र दर क्षेत्र महापाषाणिक कब्रगाहों में अनेक विविधता दिखाई पड़ती हैं। यह विविधता क्षेत्र दर क्षेत्र के भौगोलिक पृथककरण व संसाधनों की उपलब्धता पर निर्भर करता हैं। ''प्रायः महापाषाण एक स्मृति प्रतीक के रूप में परिभाषित किया जाता है, जिसका निर्माण वृहद पाषाणों या पत्थरों से हुआ है। परन्तु इसका यह अर्थ नही है कि सभी स्मृति–प्रतीकों का संबंध सिर्फ महापाषाणिक संस्कृति से है। इसी प्रकार, यह भी आवश्यक नहीं की सभी महापाषाणिक कब्रगाहों का संबंध पत्थरों से ही हो, उदाहरण के तौर पर अस्थि–कलश

व सार्कोफेगस केवल दफनाये जाते है इनमें पत्थरों का प्रयोग नही होता है। अस्थि–कलश व सार्कोफेगस को महापाषाण के श्रेणी में रखा गया है।'' (के0पी0राव, 1988)

उपरोक्त तथ्य में के.पी. राव के अनुसार अस्थि–कलश को महापाषाण की श्रेणी में रखा गया, जिसका संबंध वृहद पत्थरों से न होकर केवल दफनाने से हैं। किन्तु वी. सेल्वाकुमार ने अपने लेख ''द आर्कयोलॉजीकल बरियल' में बताया है कि ''अस्थि–कलश एवं सार्कोफेगी सदैव दफनाये जाते थे लेकिन कुछ केस में इन दोनों में स्टोन चेम्बर का भी प्रयोग मिलता है''। (वी. सेल्वाकुमार, 2003)

ए.डी. सुदंर (1975) ने महापाषाणिक कब्रगाहों को तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया। प्रथम श्रेणी में **'चेम्बर युत महापाषाणिक'** कब्रगाहों का उल्लेख प्राप्त होता है। चेम्बर युक्त महापाषाणिक कब्रगाहों को कई उप–प्रकारों में भी वर्गीकृत किया गया है। चेम्बर युक्त महापाषाणिक कब्रगाहों की श्रेणी में सिस्ट, डोलमेनॉयड सिस्ट केर्थन सर्कल व गुफा–समाधि इत्यादि सम्मिलित है। द्वितीय वर्गीकरण में **'बिना चेम्बर युक्त महापाषाणिक कब्रगाहों'** को रखा गया हैं। इस श्रेणी में पीत–समाधि, अस्थि–कलश व सार्कोफेगी इत्यादि प्रकार के महापाषाणिक कब्रगाह आते है। तीसरे प्रकार के रूप में **स्मृति–पट्टीका या प्रतीक वाले महापाषाणिक पत्थरों** को रखा। जिसका संबंध दफनाने की विधि न होकर गैर–शवाधान की प्रकृति से संबंधित हैं। (सुदंर, 1975)

इस प्रकार के महापाषाण का प्रयोग केवल अपने पूर्वजों के सम्मान व अन्य किसी कारणों से केवल स्मृति–स्मारक के रूप में स्थापित किये गये थे। दक्षिण भारत के महापाषाणिक समाधियों के प्रकारों का वर्गीकरण यू.एस. मूर्ति (1989) ने भी किया हैं। इन्होंने महापाषाणिक समाधियों को मुख्यतः दो भागों में वर्गीकृत किया हैं। प्रथम का संबंध 'शवाधान प्रकृति' से संबंधित है, वही दूसरे प्रकार का संबंध 'गैर–शवाधान प्रकृति' से हैं। शवाधान प्रकार के महापाषाणीय समाधियों में उन पत्थरों को रखा गया है, जिनका प्रयोग दफनाने या गड्ढ़ों में शव के अस्थियों को गाड़े जाने के पश्चात् उसके

ऊपर वृहद पाषाणिक पत्थरों को रखा गया हैं। दूसरे प्रकार के गैर–शवाधान प्रकृति के महापाषाणीय पत्थरों को केवल स्मृति के तौर पर प्रागैतिहासिक मानवों द्वारा प्रयोग किया गया था। इसका संबंध किसी भी प्रकार के शवाधान पद्धति या दफनाने की पद्धति से नहीं है। यू0एस0 मूर्ति ने प्रथम के प्रकार के शवाधान प्रकृति के महापाषाणिक पत्थरों को पुनः तीन उप–प्रकारों में बॉटा हैं। प्रथम, 'पीट बरियल' के अंतर्गत आने वाले महापाषाणिक समाधि। दूसरा, चेम्बर युक्त शवाधान के अंतर्गत आने वाले महापाषाणिक पत्थर। तीसरा, 'पैरों वाला या बिना पैरो वाला अस्थि–कलश' प्रकार के अंतर्गत आने वाले महापाषाणिक समाधि। गैर–शवाधान प्रकृति वाले महापाषाणिक पत्थर, जिनका संबंध केवल स्मृति प्रतीकों के रूप में है, इस श्रेणी में डोलमेन, पोर्टहॉल डोलमेन व मेनिहिर प्रकार के पत्थरों को सम्मिलित किया गया है। (मूर्ति, 1989)

केनेड इ. आर. केनेडी ने गैर–शवाधान प्रकार के महापाषाणिक पत्थरों के संदर्भ में लिखा कि ''वॉल हाउस (1877) ने अध्ययन किया कि दखिण भारत के कुछ महापाषाण पूर्णतः स्मरणीय स्मारक प्रकृति अर्थात् गैर–शवाधान प्रकृति के थे। ये स्मारक पत्थर उन तत्कालीन जनजातीय लोगों के लिए अत्यंत महत्व रखता था, जो अपने मृतक पूर्वजों के सम्मान के लिए स्मृति के तौर पर पत्थरों को स्थापित करते थे''। लेस्निक (1974) ने भी यह तर्क दिया किया डोलमेन प्रकार के महापाषाण एवं दूसरे सतही स्मारक का संबंध शवाधान प्रकार से जुड़ी परंपरा का द्योतक नहीं था। (केनेडी, 1975)

गैर–शवाधान प्रकार के पत्थरों को महापाषाणीय पत्थरों की श्रेणी में तो रखा गया है किन्तु इस प्रकार के महापाषाणीय पत्थरों को किसी भी तरह के शवाधान प्रकृति के परिचायक नहीं थें।

इसी प्रकार महापाषाणिक परंपरा से जुड़े विभिन्न विद्वानों ने महापाषाणिक पत्थरों को विविध प्रकार से श्रेणीगत करने का कार्य किया। महापाषाण परंपरा से संबंध रखने वाले महापाषाणिक पत्थरों के वर्गीकरण का विवरण देना आवश्यक हो जाता है, जिससे की महापाषाणिक संस्कृति से संबंध रखने वाले विभिन्न श्रेणियों को सुलभता से समझा जा

सके। विभिन्न प्रकार के महत्वपूर्ण महापाषाणिक पत्थरों का विवरण इस प्रकार हैं जिनका संबंध शवाधान से संबंधित, कक्ष वाले (चेम्बर) कब्रगाह व बिना कक्ष वाले कब्रगाह और गैर–शवाधान से संबंधित प्रकार के महापाषणीय पत्थरों से हैं। साथ ही इन महापाषणीय प्रकार के पत्थरों का पूरे भारत के संदर्भ में इसके वितरण का उल्लेख करना भी आवश्यक है। स्पष्ट है कि महापाषाणिक कब्रगाहों का वितरण दक्षिण भारत के अतिरिक्त, दक्कन के महाराष्ट्र उत्तर भारत के कश्मीर, मध्य प्रदेश, उत्तराखंड, इसके अतिरिक्त पूर्वी भारत से छोटा नागपुर, उड़ीसा, विंध्य के मिर्जापुर, वाराणसी व इलाहाबाद तथा उत्तर–पूर्व भारत के आसाम, सिक्किम, नागालैण्ड व अरूणाचल प्रदेश तक प्रसार हैं।

1. गर्त शवाधान–

एक प्रकार का गर्त या गड्ढ़ा (गोलाकार/आयताकार) जिसमें मृत शव के अस्थियॉ या नर कंकालों को कुछ भौतिक वस्तुओं यथा धातु, उपकरण, मृदभांड, सिक्के या अन्य उपयोगी सामग्री को साथ में गड्ढ़े में रखकर ढक दिया जाता है। इसके ऊपर छोटे–छोटे पत्थरों के ब्लाउडर को रख दिया जाता हैं। इस प्रकार के शवाधान का संबंध मुख्यतः दक्षिण भारत व विंध्य के क्षेत्रों से है। इसका वितरण का प्रमाण मास्की व सन्नूर से प्राप्त होता है। (सुड्कया, 2006), चित्र संख्या–1

2. सिस्टः

यह एक प्रकार से कक्ष वाला (चेम्बर) कब्रगाह है। जिसमें आयताकार या वर्गाकार गड्ढ़े बनाकर 4 या इससे भी अधिक बनाकर रखा जाता है। ये पत्थर पूरी तरह से गड्ढ़े के भीतर ही होते है। इन पत्थरों को ऑर्थोस्टेट कहा जाता है। सिस्ट प्रकार कई महापाषाणिक कब्रगाहों में चार या इससे अधिक ऑर्थोस्टेट में से किन्हीं एक में वृत्ताकार/आयताकार/या वर्गाकार छेद होता है, जिसे पोर्टहॉल या गवाक्ष कहा जाता है। दक्षिण भारत के कई क्षेत्र (उत्खनन से प्राप्त) से जहॉ सिस्ट कब्रगाहों में ऑर्थोस्टेट पत्थरों को स्वास्तिक आकृति में बनाया गया हैं। स्वास्तिक प्रकार के सिस्ट कब्रगाह के

प्रमाण दक्षिण भारत के कोडुमनाल, ब्रह्मगिरि, कोक्षीकोड, ड्ररागुड्डी (केरल), पोर्नुमाल (केरल) से साक्ष्य प्राप्त होते है। (सुड्कया, 2006), चित्र संख्या–1

3. डोलमेनॉयड–सिस्ट

डोलमेनॉयड–सिस्ट में 4 या 4 से अधिक ऑर्थोस्टेट पत्थर आधे भाग कब्र के भीतर व आधे भाग कब्र के ऊपर होते हैं। इनके ऊपर एक क्षैतिज पत्थरों को विद्या दिया जाता है जिसे तकनीकि भाषा में 'केपस्टोन' कहा जाता हैं। यह आकृति में एक मेज की भॉति दिखता प्रतीत होता हैं। वैसे 'डोलमेन' केल्टिक भाषा का शब्द है जिसका शाब्दिक अर्थ पत्थर की मेज है। कभी–कभी डोलमेन को बीच से दो या चार भागों में विभाजित करने के लिए अतिरिक्त शिलाओं का उपयोग करके अलग–अलग प्रकोष्ठ बना दिये जाते थे। एक कब्र में एक या अनेक शवों को दफनाया जाता था। इस प्रकार के कब्र का प्रमाण दक्षिण भारत के कोडुमनाड, मालासंदर इत्यादि स्थलों से प्राप्त होते हैं।

डोलमेन प्रकार के महापाषाणिक पत्थर डोलमेनॉयट–सिस्ट के ही उप–प्रकार है। डोलमेन में प्रायः ब्लाउडर का प्रयोग किया जाता हैं। इन दोनों प्रकार के पत्थरों के कब्रगाहों से द्वितीयक शवाधान के अधिक प्रमाण मिलते हैं। कब्रगाहों से लोहे, तॉबे, मनके, सिक्के व कृष्ण लोहित मृदभांड के प्रमाण मिलते है। डोलमेन प्रकार के महापाषाणीय पत्थरों का वितरण दक्षिण भारत के अतिरिक्त छोटानागपुर व छत्तीसगढ़ से भी साक्ष्य प्राप्त होते हैं। (पाण्डेय, 2015), चित्र संख्या–3

हालांकि डोलमेन को कुछ इतिहासकार और पुरातत्वविद् इसे गैर–शवाधान विधि से जुड़ा हुआ मानते है।

4. केयर्न वृतः

यदि किसी गड्ढ़े वाले कब्र के चारो ओर गोलाकार पत्थरों की संरचना देखी जाती है तो इसे पीट–सर्कल कहा जाता है। वही एक महापाषाण में पत्थरों को एक के ऊपर

एक गोलाकार स्वरूप में रखा जाये तो इसे केयर्न–वृत प्रकार का महापाषाण कब्रगाह कहा जाता हैं। (सिंह, 2015), चित्र संख्या–1

गड्ढ़े में मृत मनुष्य की अस्थियॉ, मृदभांड़ एवं अन्य धातु सामग्री प्राप्त होते हैं। गड्ढ़े में कभी–कभी मिट्टी युक्त शव–पेटिकाएँ (सार्कोफेगी) भी रखी हुई मिली है, जिनमें मनुष्यों की अस्थियों के अतिरिक्त लौह उपकरण एवं मृदभांड प्राप्त हुए है। केयर्न वृत में कब्र के ऊपर गोलाकार पत्थरों के बीच में अनेक पत्थरों को बिछा दिया जाता हैं। केयर्न प्रकार के पत्थरों की अधिकता दक्षिण भारत के अतिरिक्त विदर्भ में महुर्क्षरी व विंध्य क्षेत्रों से प्राप्त होता हैं।

5. टोपीकल

इसे कक्ष वाले (चेम्बर) कब्रों की श्रेणी में रखा गया हैं। ज्यादातर उत्तरी कर्नाटक एवं केरल में टोपीकल प्रकार के महापाषाणिक पत्थरों के पाये जाने के प्रमाण मिलते है। टोपीकल वाले कब्रों में जार के अंदर शवों को रखकर जमीन के भीतर गड्ढ़े में दफनाया जाता था। और एक उत्तल या वृत्ताकार कैप्सटोन के द्वारा ढक दिया जाता था।

टोपीकॉल प्रकार के महापाषाणिक पत्थरों का वितरण केरल के आदिचेनल्लूर, चेरमनगाद, कोझीकोड, मालप्पुरम् व त्रिशूर इत्यादि महापाषाणिक स्थलों से प्राप्त होता है। (पाण्डेय, 2015), चित्र संख्या–1

6. कुड़ईकल

कुडईकल प्रकार के महापाषाणिक कब्रगाह प्रायः केरल में पाये जाते है। इस प्रकार के समाधियों में गड्ढ़ा को खोदकर उसमें मानव अस्थियॉ और अंतेष्ठि सामग्री को रखकर गड्ढ़े को मिट्टी से भर दिया जाता है। कुडईकाल वाले महापाषाण कब्र में जार को ऐसे कक्षों रखा जाता था जिसके ऊपर चार ऑर्थोस्ट्रेटस स्लैब रखे जाते थे थे और

एक अर्धगोलाकार कैपस्टोन रखा जाता था। यह 'छाते' के आकार में दिखाई देता है। केरल के स्थानीय भाषा में इसे 'कुडईकाल' कहा जाता हैं।

कृडईकाल प्रकार के महापाषाणिक पत्थरों के प्रमाण अरिच्यूर, काडारागांडे वरीकुल्लम, चेरमननगाद से प्राप्त होता हैं। (पाण्डेय, 2015), चित्र संख्या–1

7. गुफा समाधि

इसका निर्माण छोटे पहाड़ियों के लेटराइन चट्टानों को कॉट–छॉट कर किया गया है। प्रायः से कक्ष वाले समाधि की श्रेणी में रखा जाता है, जो आकृति में वर्गाकार या आयताकार प्रकार के होते है। इन गुफाओं मे एक से अधिक मृतको (बहु–शवाधान) एक ही कक्ष वाले गुफा में दफनाये जाने के प्रमाण मिलते हैं।

के0पी0 राव के अनुसार यज्ञ दत्त शर्मा (1906) ने केरल से गुफा –समाधि वाले कब्र की खोज की और जोर देते हुए तर्क दिया कि इस प्रकार के कब्र का संबंध महापाषाण परंपरा से हैं। (राव, 1988)

प्रायः गुफा समाधि वाले महापाषाणिक कब्र के साक्ष्य अत्यधिक केरल से प्राप्त होते है। केरल के मालाबार, कोच्ची, उमाचीपोल्ली इत्यादि महापाषाणिक स्थलों से प्रमाण प्राप्त होते हैं। चित्र संख्या–1

8. अस्थि–कलश

अस्थि–कलश प्रकार के महापाषाणिक कब्र महापाषाण परंपरा से संबंधित पूर्व–काल से भी प्राप्त होते हैं। अस्थि–कलश प्रकार के शवााधान के प्रमाण हड़प्पा संस्कृति, उत्तर हड़प्पा संस्कृति ताम्रपाषाण संस्कृति के इनामगॉव इत्यादि प्रागैतिहासिक स्थलों से प्राप्त होते है। कुछ पुरातत्वविद्ो ने अस्थि–कलश को पूर्णतः स्वदेशी प्रकार का महापाषाणीय समाधि माना हैं।

इस प्रकार के समाधि में एक मृदभांड के कलश में, जिनमें भित्ती चित्र इत्यादि भी बने होते थे, मृत मानव के शरीर के विभिन्न भागों के अस्थिों व साथ में आभूषण, मनके, सिक्के व धातु के अन्य समाग्रियों को कलश में रखकर कब्र में या गड्ढ़े में दफनाया जाता था।

यू0एस0 मूर्ति अस्थि–कलश प्रकार के समाधि को पैरों वाला व बिना पैरों वाला मिट्टी का जार बताया। (मूर्ति, 1989)

पैरो वाला मिट्टी के शव–मंजूषा होते है जिसे अंग्रेजी शब्द में 'सार्कोफंगी' कहा जाता है, और सिर, किसी पशु के माथे का बना होता है। एन. आर. बनर्जी ने चिंग्लपट्टु, सत्नूर व अमृतामंगलम् जैसे महापाषाणीय स्थलों का अध्ययन किया हैं। इसके अतिरिक्त ब्रह्मगिरि मास्की व आदिच्ललूर से भी अस्थि–कलश प्रकार के समाधि के प्रमाण मिलते हैं। (बनर्जी, 1969)

अस्थि–कलश व शव–मंजूषा प्रकार के समाधि में क्रमशः पाषाण का अभाव होता है। मोहंती व वी0 सेल्वा कुमार के अनुसार 'यद्यपि अस्थि–कलश एवं शव–मंजूषा (सार्कोफेगी) प्रकार के समाधि सदैव दफनाये जाते थे। लेकिन कुछ मामलों में इन दोनों में स्टोन चेम्बर का प्रयोग मिला है''। (सेल्वा कुमार, 2003)

बनर्जी (1967), गुरूराज राव (1972), के0पी0 राव (1989) इत्यादि लेख में शव–मंजूषा (सार्कोफेगी) में तीन प्रकार के कच्चे माल का प्रयोग मिलता है, टेराकोटा, लकड़ी एवं पत्थर। (सेल्वा कुमार, 2003)

अस्थि–कलश प्रायः दक्षिण कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु (राजन, 1997) में सामान्य रूप से प्राप्त होता है। कुडातानी से अस्थि–कलश में छः वर्ष के बच्चे का कंकाल पाये जाने के साक्ष्य मिले है। अस्थि–कलश के प्रमाण, कोडीकनाल (तमिलनाडु) कुन्नतुर (चिंगलपेट), पोरकल्लम केरल, येल्लश्वरम् (आन्ध्र प्रदेश), अमरावती, मालाबार, वायनाड, त्रिरूनेलवेली व सेन्गामेडु इत्यादि महापाषाणीय स्थलों से प्रमाण मिलते हैं।

अस्थि–कलश में प्राथमिक शवाधान एवं द्वितीयक शवाधान दोनों प्रकार के प्रमाण मिलते हैं। छोटा नागपुर पठारी क्षेत्र में मुंडा, हो व उरॉव तथा असुर जनजातियों में द्वितीयक शवाधान प्रक्रिया द्वारा अस्थि–कलश में मृत व्यक्ति के अस्थि एवं अन्य सामग्रियों के साथ दफनाने तथा इसके पश्चात् इसके ऊपर एक क्षैतिज पत्थर (केंपस्टोन) को बिछायें जाने की परंपरा वर्तमान संदर्भ में भी प्रचलित हैं। यह परंपरा आज भी जीवंत हैं। चित्र संख्या–1

मेंनिहिर–

एक एकाश्म वृहद पाषाण, जिसमें केवल एक वृहद पत्थर के लम्बत खड़ा किया जाता है। मेनिहिर के लम्बाई में विविधता मृतक के उम्र, लिंग व सामाजिक स्थिति (मृतक के) पर निर्भर कर सकता हैं। ज्यादातर पुरातत्वविद् इस तथ्य को लेकर एक मत है कि मेनिहिर एक प्रकार का अपने मृतक पूर्वज के सम्मान या अन्य किसी उद्देश्य के लिए गाड़ा गया स्मृति प्रतीक व स्मारक हैं। मेनिहिर का संबंध शवाधान विधि व गैर–शवाधान विधि दोनो प्रकार से हैं। उत्खनन कार्य से यह ज्ञात होता है कि सामान्य तौर मेनिहिर का सम्बन्ध गैर–शवाधान पद्धति से होता है। कई बार मेनिहिर को खगोलीय तकनीक से भी जोड़कर देखा जाता है।

सामूहिक मेनिहिर–

यदि मेनिहिर का जमीन में स्थापन सामूहिक रूप से किया जाता है तो इसे सामूहिक मेनिहिर या 'एलाइंग्नमेंट' कहा जाता है। वी0डी0 कृष्णास्वामी (1949) एवं के0पी0 राव (1989) इत्यादि लेखकों के अनुसार, यदि सामूहिक मेनिहिर (एंलाइग्नमेंट) दो या दो से अधिक पंक्ति में स्थापित किये गये हो तो उसे 'एवेन्यू' या वृक्षवीथि कहा जाता है। (कृष्णास्वामी, 1949)

सामूहिक मेनिहिर (ऐलाइग्नमेंट) मृतक पूर्वजों के याद में गाड़े जाते थे (सुंदर, 1975)। जहॉ से किसी भी प्रकार उत्खनन के दौरान मानव–अस्थि, भौतिक संस्कृति के प्रमाण नहीं मिलते। मास्की (थापर, 1975) और पिक्कलिहल (अल्चिन एवं अल्चिन

1966) इत्यादि सामूहिक मेनिहिर प्रकार महापाषाणीय संस्कृति से कब्र के भीतर किसी भी प्रकार के भौतिक संस्कृति के प्रमाण नहीं मिलते। रामचूर, गुलबर्गा, नेलगोंडा, हनमसागर, महबूबनगर, विभूतिहल्ली से मेनिहिर प्रकार के व सामूहिक मेनिहिर प्रकार के महापाषाणीय संस्कृति से संबंधित साक्ष्य प्राप्त होते है।

मेनिहिर का शवाधान पद्धति से संबंध न होने के बावजूद इसे महापाषाणिक संस्कृति के अंतर्गत चिन्हित किया जाता है। महाराष्ट्र के विदर्भ में मेनिहिर का सामान्य प्रचलन नहीं था। विंध्य से भी मेनिहिर के अत्यन्त सीमित प्रमाण मिलते है। मोडूमनाल से प्राप्त अनेक मेनिहिर व सामूहिक मेनिहिर का संबंध खगोलीय तकनीक से है। (राव, 1988) लेस्निक (1974) दक्कन व दक्षिण भारत के अतिरिक्त गुफ्फराल (कश्मीर), अल्मोड़ा (उत्तराखण्ड), अरावली क्षेत्र (राजस्थान), छत्तीसगढ़, छोटानागपुर पठार (झारखण्ड) एवं उत्तर–पूर्वी राज्यों यथा आसाम, मणिपुर नागालैण्ड से भी मेनिहिर व सामूहिक मेनिहिर के प्रमाण प्राप्त होते है।

चित्र संख्या–1, सभी प्रकार के महापाषाणिक समाधियों का चित्रांकन

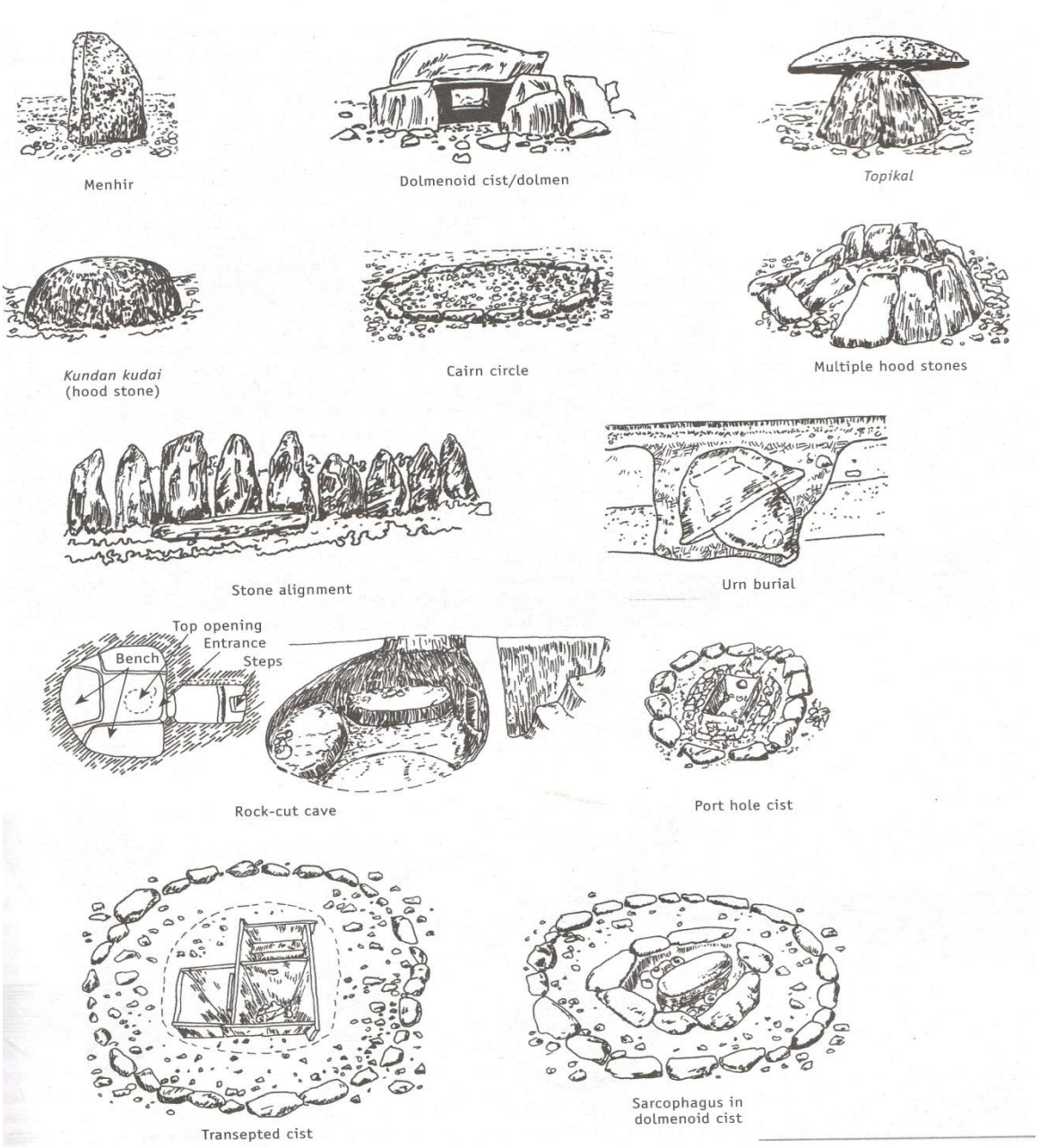

स्रोत–इन्साइड ऑफ इंडियन आर्कायोलॉजी, मेगालिथ, वाल्यूम–1, अमलानन्द घोष, 1990

छोटानागपुर पठार, छत्तीसगढ़ व उत्तरी–पूर्वी राज्यों से प्राप्त मेनिहिर प्रकार के महापाषाणीय एकाश्म पत्थरों का संबंध द्वितीयक शवाधान पद्धति व गैर–शवाधान पद्धति दोनों ही प्रकार से हैं।

वस्तुतः महापाषाणिक संस्कृति के अध्ययन में महापाषाणिक पत्थरों के वर्गीकरण कर अध्ययन करना महज भौतिक संस्कृति की व्याख्या करना नही वरन् इस तथ्यों को भी उद्घाटित करना है कि दफनाने से संबंधित संस्कृति में दफनाने के विविध आयामों का प्रयोग तत्कालीन समृद्ध समाज के द्वारा किस प्रकार किया जाता था।

महापाषाणीय पत्थरों का वर्गीकरण इन प्रश्नों को भी प्रस्फुटित करता है कि विविध प्रकार के महापाषाण का संबंध तत्कालीन विविध प्रकार के समुदायों से था? या एक ही समुदाय के लोगों के भौगोलिक परिवर्तन, पीढ़ी दर पीढ़ी सामाजिक, सांस्कृतिक व आर्थिक परिवर्तन तथा अपने सहजता व सुलभता के हिसाब से दफनाने की विधि में विविध प्रयोग करने वाले लोगों से था?

दक्षिण भारत के अतिरिक्त शेष पूरे भारत में महापाषाणिक संस्कृति व परंपराओं के समस्त वितरण की ओर चयन ध्यान आकृष्ट किया जाये ंतो बी0के0 थापर (1985) के इस कथन पर गौर करना चाहिए कि ''महापाषाणीय परंपरा का विस्तार भारत के उत्तर–पूर्व मणिपुर से बस्तर, मध्यप्रदेश (अब छत्तीसगढ़) तथा बिहार के हजारीबाग जिले और सिंहभूम जिले (दोनों जिले अब झारखण्ड में) तक फैलाव था।'' (थापर, 1985)

वितरण का अध्ययन केवल महापाषाणिक परंपरा से संबंधित स्थलों के संदर्भ में किये जाने के अतिरिक्त महापाषाणिक परंपरा से संबंधित आवासीय स्थल, लौह गलाने के उद्योग से संबंधित स्थल, कृष्ण लोहित मृदभांड से संबंधित स्थल, उत्खनन और गैर–उत्खनन कार्य से संबंधित व धातु विज्ञान से संबंधित महापाषाणिक स्थलों का विवरण देना प्रासंगिक होगा। 2500 से भी अधिक महापाषाणिक स्थलों को पूरे भारत वर्ष में चिन्हित किया गया है। यह परंपरा दक्षिण भारत में अत्यन्त लम्बे समय तक

समृद्ध अवस्था में रही। प्रश्न यह उठता है कि महापाषाणिक परंपरा का फैलाव पूरे भारत में किस पकार हुआ? क्या यह दक्षिण भारत से आरम्भ हुआ, या अन्य दूसरे देशों से महापाषाण परंपरा का फैलाव दक्षिण भारत तक हुआ? हालांकि विभिन्न विद्वान इस संदर्भ में एक मत नहीं रखते ।

दक्षिण भारत के तमिलनाडु के आदिच्चलुर, सन्नूर, चिंगेलपेट, पैयमपल्ली, सेन्गामेडु महत्वपूर्ण महापाषाणिक स्थल है जहॉ से महापाषाणिक परंपरा के अत्यन्त समृद्ध अवस्था के भौतिक प्रमाण (उत्खनन से व खोज से प्राप्त) का साक्ष्य मिलता है। कर्नाटक के हल्लूर, ब्रह्मगिरि, मास्की, संगनकल्लु, टेक्कलकोटा, पिक्कलीहल्ल, कुमारनहल्ली, टी.नरसीपुर, जगदेनहल्ली, चंद्रवाल्ली इत्यादि महत्वपूर्ण महापाषाणिक स्थलों से महापाषाणिक परंपरा के प्रमाण मिलते है। आंध्र प्रदेश के गुंटूर, कुर्नुल, अमरावती, येल्लश्वरम् इत्यादि महत्वपूर्ण महापाषाणिक स्थल है। (सुड्कया, 2006)

केरल में चेरमनगाद, अरिभ्यूर, त्रिचुर, पोरक्कलम, मालाबार, वायनाड, त्रिरूणवेली से महापाषाणिक संस्कृत के प्रमाण मिलते है। महाराष्ट्र के महुर्क्षरी, टेक्कलघाट, जूनापनी, नैकुण्ड, रायपुर, खापा, बडगाव इत्यादि महत्वपूर्ण महापाषाणिक स्थल है। इसके अतिरिक्त कश्मीर, उत्तराखंड, राजस्थान, विंध्य के वाराणसी, काकोरिया, कोटिया, इलाहाबाद, बांदा अति महत्वपूर्ण महापाषाणिक स्थल हैं जिनका संबंध मूलतः लौह–पूर्व युग से हैं।

उड़ीसा, छत्तीसगढ़, छोटानागपुर पठार व उत्तरी–पूर्वी भारत के आसाम, मणिपुर तथा नागालैण्ड से महापाषाणिक संस्कृति के प्रमाण मिलते है। इन क्षेत्रों के कई जनजाति आज भी महापाषाणिक परंपरा का अनुपालन प्राचीन समय से ही करते आ रहे है।

महापाषाण परंपरा से संबंधित बस्तियॉ व आवासीय स्थलों के प्रमाण मास्की पेयमपल्ली, टेक्कलघाट, हीरेबेंकल, माहुर्क्षरी, संगनकल्लु इत्यादि से प्राप्त होता है। नरकंकालों में प्रमाण–ब्रह्मगिरि, येल्लश्वरम् आदिच्चलूर से प्राप्त होता हैं। मानव आकृति

प्रकार के महापाषाण पत्थर के प्रमाण ऐहोल, हीरेबेंकल, मोट्टूर व उदईमारटम से प्रमाण प्राप्त होते है। (सुड्कया, 2006)

महापाषाण से संबंधित शैल चित्र के प्रमाण हीरेबंकल व पेयमपल्ली से प्राप्त होता है। महापाषाणिक कब्रगाहों से घोड़े के अस्थियों के प्रमाण रायपुर, नैकुण्ड व माहुर्क्षरी से प्राप्त होता है।

महापाषाणिक कब्रों के उत्खनन से प्राप्त भौतिक वस्तुएं तत्कालीन महापाषाणिक परंपरा से संबंधित भौतिक संस्कृति पर व्यापक प्रकाश डालती हैं। लोहे का प्रयोग, कृष्ण लोहित मृदभांड, अस्थि व नरकंकाल, अस्थि–कलश, महापाषाणिक पत्थर, उत्कृण चित्र, भित्ती चित्र तथा रोमन सिक्के मनके अन्य प्रकार के सामग्री जो उत्खनन के दौरान प्राप्त हुए है, उससे उनके धातु विज्ञान, दफनाने की विधि एवं उनसे जुड़े सामग्री इत्यादि गतिविधियों पर व्यापक प्रकाश पड़ता है। किन्तु भौतिक अवशेष संबंधित नकारात्मक तथ्य यह है कि अतीत के सामाजिक मनुष्य द्वारा आचरण में लाये जाने वाले धर्म व विश्वास पर विशेष प्रकाश नहीं डालती। (बनर्जी, 1969) वस्तुतः महापाषाणों के आकार भौतिक लक्षणों की लक्षणों की व्याख्या करना आसान्न हैं। किन्तु उनसे जुड़े विश्वासों तथा आस्थाओं की प्रयोग तत्कालीन समयावधि में व्यापक तौर पर हुआ है, इस प्रकार प्राप्त भौतिक अवशेष से संज्ञानात्मक विकास की जानकारी प्राप्त नहीं होती है।

मुख्यतः लोहे गलाने का कार्य कोडुमनाल, नैकुण्ड व खूँटी टोली (स्वामी, 1996) में होता था। विंध्य क्षेत्र में कोटिया से लोहे के प्रमाण प्राप्त होते है, विदर्भ से भी लोहे के साक्ष्य मिले है, वस्तुतः विदर्भ व विंध्य के महापाषाणिक परंपरा का संबंध पूर्व–लौह युग अर्थात् नवपाषाण–ताम्रपाषाण संस्कृति से है। विंध्य के ज्यादातर महापाषाणिक क्षेत्रों व कब्रों से लघु पाषाण, उपकरण व ताम्बे के पुरावशेष मिले है। लोहे के उपकरण के प्रमाण टेक्कलघाट से प्राप्त होते हैं।

मृदभांड में कृष्णलोहित मृदभांड का प्रयोग व्यापक रूप में हुआ है। महापाषाणिक मृदभांड के भित्ती चित्र का विश्लेषण (लाल, 1960) के द्वारा किया गया है। केनेथ केनेडी महोदय ने ब्रह्मगिरि, मास्की, हल्लूर, संगनकल्लू, पिक्कलीहल इत्यादि का महापाषाणिक कब्रों का उल्लेख किया है, जहॉ लोहे के साथ–साथ कृष्ण लोहित मृदभांड के संयुक्त रूप से प्रमाण मिले है। (केनेडी, 1975) विंध्य क्षेत्रों से कृष्ण–लोहित मृदभांड के अतिरिक्त लाल रंग के भी मृदभांड प्राप्त हुए है।

केनेथ केनेडी महापाषाणिक परंपरा से संबंधित नरकंकालों का अध्ययन कर महापाषाणिक भौतिक संस्कृति का अध्ययन किया (केनेडी, 1975)। एस0बी0 देव ने दक्कन के महापाषाणीय कब्रों के साथ–साथ आवासीय बस्तियों का अध्ययन किया। टेक्कलघाट, खापा इत्यादि क्षेत्र विदर्भ के आवासीय बस्तियॉ थी। इसके अतिरिक्त हीरेबेंकल महुर्क्षरी, संगनकल्लु व मास्की इत्यादि से भी आवासीय बस्तियों के प्रमाण मिले है। (देव, 1978)

भौतिक संस्कृति उत्खनन से प्राप्त साक्ष्य यह अवश्य बताती दफनाने के दौरान कब्र में मृतक की अस्थियों के साथ–साथ कौन–कौन अन्य समाग्रियां दफनाने के कार्य में प्रयोग में लायी जाती थी, किन्तु भौतिक संस्कृति से समाज के संज्ञानात्मक पक्ष का उजागार अत्यन्त सीमित सहायता मिलती है। एन0आर0 (बनर्जी, 1960) के शब्दों में ''समस्या यह है कि प्राप्त भौतिक पुरावशेष व इनसे जुड़े संस्कृति इस संदर्भ में विस्तृत नही बता पाते कि महापाषाणीय लोग कौन थे, कहॉ से आये थे, इस प्रकार की दफनाने की विधि कब से आरम्भ हुई थी''। (बनर्जी, 1969)

शवाधान प्रक्रिया की प्रकृति क्या थी? यह एक विद्वानों के बीच अत्यन्त मतभेद का विषय हैं। शवाधान के लिए केवल दफनाने की विधि (प्राथमिक शवाधान) अनुप्रयोग में लायी जाती थी या शवों को जलाने के पश्चात् मृतक के शेष बचे अस्थियों को कलश में डालकर दफनाया जाता था (द्वितीयक शवाधान पद्धति) यह उत्खनन से प्राप्त भौतिक सामग्री से ही उत्घाटित हो सकती है। एन0आर0 बनर्जी ने चिंगेलपेट

(तमिलनाडु) का अध्ययन करने के पश्चात् पाया कि शवाधान के लिए प्राथमिक शवाधान पद्वति का न प्रयोग करके केवल द्वितीयक शवाधान पद्धति का प्रयोग किया जाता था। वी0 सेल्वा कुमार के अनुसार ''ज्यादातर महापाषाणिक कब्र से पूरी नरकंकाल के अवशेष न प्राप्त होकर केवल कुछ अस्थियॉ प्राप्त हुई है, कुछ महापाषाणिक कब्रों से कुछ भी नही प्राप्त हुआ है''। (सेल्वा कुमार, 2003) यह इस तथ्य की ओर इशारा करता है कि 'शवाधान प्रक्रिया में द्वितीयक शवाधान पद्धति का व्यापक पैमाने पर प्रयोग हुआ है।

वर्तमान में भी महापाषाणिक परंपरा को प्रयोग में लाने वाली गोंड, मारिया, मुंडा, हो और खसी इत्यादि जनजाति समुदाय प्रायः द्वितीय शवाधान का प्रयोग करती रही है। किन्तु यू0एस0 मूर्ति ने तक दिया है कि ''इस समय प्राथमिक शवाधान व द्वितीयक शवाधान दोनो प्रकार के शवाधान पद्धति का प्रयोग हो रहा था।'' (मूर्ति, 1989)। गर्त शवाधान (पीट ब्यरियल) एवं अस्थि–कलश (अर्न–ब्यरियल) दोनों प्रकार के शवों को दफनाने की पद्धति पूर्व–महापाषाणिक संस्कृति से ही होती आ रही है।

इस प्रकार के दफनाने जाने के प्रमाण नवपाषाणकाल के पश्चात् हड़प्पा युग, उत्तर हड़प्पाकाल, ताम्र पाषाण युग थे ऐसे प्रमाण पुरास्थलों से प्राप्त होते है। यू0एस0 मूर्ति ने शवों को दफनाने में उम्र के महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखते है कि 'एक ओर, जहॉ नवपाषाण/ताम्रपाषाण युग में ज्यादातर किशोरावस्था के बालक/बालिकाओं के कब्र में दफनाने के ज्यादातर प्रमाण मिलते है, वही वयस्क अवस्था वाले व्यक्तियों को कम दफनाये जाने के प्रमाण मिलते है, वही दूसरी ओर महापाषाण संस्कृति से ज्यादातर वयस्क अवस्था वाले व्यक्तियों को दफनायें जाने के अधिक प्रमाण मिलते है, व किशोरावस्था के उम्र वाले बच्चों को दफनाये जाने के अल्प प्रमाण मिलते है। (मूर्ति, 1989 : 755)।

भारत में महापाषाणिक संस्कृति के विषय में सर्वप्रथम विदेशी विद्धानों ने प्रकाश डाला। इसका विकासक्रम का आरम्भ 19वीं सदी से ही प्रारम्भ होता है। भारत के भिन्न क्षेत्रों

में रहने वाले अंग्रेजी अधिकारियों ने भी महापाषाण के होने के साक्ष्य को दस्तावेजीकृत किया।

19वीं सदी में बेंबिंग्टन (1823) महोदय ने केरल से महापाषाण के संदर्भ को चिन्हित किया, जिसका उल्लेख उनके लेख कार्य 'पांडू कुलिज इन मालाबार' से प्राप्त होता है। हालांकि यह भी तर्क दिया जाता है कि कर्नल मेकैंजी ने भारत में महापाषाणिक परंपरा का अवलोकन, बेबिंग्टन महोदय से पूर्व किया था।

इसके पश्चात् मेडोज ट्रेलर 1857 का नाम आता है जिन्होंने दक्षिण भारत के महापाषाणिक कब्रगाहों का विवरण दिया। फर्ग्यूसन (1872) द्वारा लिखे गये 'रूड स्टोन मॉन्यूमेंट' से महापाषाणिक संस्कृति का विस्तृत वर्णन मिलता हैं। ब्रिक्स (1873) महोदय द्वारा लिखी गयी **'लोकल मेगालिथिक सर्वे इन नीलगिरि'** से दक्षिण भारत के प्राचीन लौहयुगीन महापाषाणिक परंपरा का वर्णन किया है। एलेक्जेंडर कनिंघम (1871) भी दक्षिण भारतीय महापाषाण परंपरा को अति उन्नत बताते हैं। उत्तर भारत की महापाषाणिक संस्कृति पर ए0सी0 कार्लइल (1878,1906) सर्वप्रथम प्रकाश डाला। छोटा नागपुर के महापाषाणिक संस्कृति पर ई0टी0 डाल्टन (1878) ने सर्वप्रथम प्रकाश डाला, जिसका वर्णन उन्होंने द कोल्स ऑफ छोटानागपुर में उल्लेख किया।

इस प्रकार 19वीं शताब्दी से महापाषाणिक संस्कृति के प्रमाण मिलने लगे थे तथापि 20वीं शताब्दी में पूर्व–स्वतंत्रता अवधि स्वंतत्रता के पश्चात् की अवधि में महापाषाणिक संस्कृति पर अनेक शोधकार्य व उत्खनन कार्य संपादित किये गये। आरम्भ में केवल इसका संबंध दक्षिण भारत से माना जाता था। महापाषाणिक परंपरा पर हुए शोधकर्ता ने महापाषाणिक संस्कृति के संदर्भ पूरे भारत के विभिन्न क्षेत्रों से प्रमाण प्राप्त होते है, इस तथ्य को स्वीकार करने में सहायता प्रदान की।

स्वतंत्रता पश्चात् अवधि में सर मार्टीमर व्हीलर (1947), गार्डेन चाइल्ड (1948) व बी0डी0 कृष्णास्वामी (1949) ने महापाषाणिक संस्कृति के धार्मिक आयाम, सामाजिक–सांस्कृतिक, मिथक व परंपराओं तथा महापाषाणिक कब्रों के वर्गीकरण पर

विभिन्न आयामों को प्रस्तुत किया। सर्वप्रथम बी0डी0 कृष्णास्वामी (1981) ने 'द क्लासीफिकेन ऑफ टाईपोलॉजी ऑफ साउथ इण्डियन मेगालिथ' पर महापाषाणिक पत्थरों का वर्गीकरण किया।

बी0के0 थापर (1952) ने अस्थि–कलश का अध्ययन किया। बी0बी0 लाल महोदय ने उत्तर–हड़प्पा के पश्चात् महापाषाणिक परंपरा के विकासक्रम का उल्लेख किया। एन0आर0 बनर्जी (1965), के0ए0 दीक्षित, दिलीप चक्रवर्ती इत्यादि पुरातत्वविदो ने महापाषाणिक संस्कृति में लोहे के व्यापक प्रयोग से जुड़े कारणों का अध्ययन किया।

के0एस0 रामचंद्रन ने भारतीय महापाषाणों का संदर्भ सूची प्रस्तुत किया। इस प्रकार हम देखते है कि महापाषाण संस्कृति से जुड़े विभिन्न विद्वानों ने महापाषाणिक परंपरा के विभिन्न आयामों का अवलोकन किया। इसके पश्चात् गुरूराज राव (1972) द्वारा 'क्रोनोलॉजी ऑफ आर्यन ऐज इन इन्डिया', ए0डी0 सुदंर (1975) द्वारा लिखित 'द अर्ली चेम्बर टाक्स ऑफ साउथ इंडिया' में दक्षिण भारतीय महापाषाणिक संस्कृति का वर्णन किया।

आल्चिन एवं आल्चिन (1983) द्वारा लिखित 'द बर्थ ऑफ, इण्डियन सिविलाइजेशन, के0राजन महोदय ने भी साउथ अॅर्काट मेगालिथ, यू0एस0 मूर्ति ने महापाषाणिक संस्कृति के सामाजिक–आर्थिक आयामों का विश्लेषण किया। आर0 के0 मोहंती व वी0 सेल्वा कुमार (2003) ने महापाषाणीय कब्रों व शवाधान में प्रयुक्त होने वाले सामग्रियों व धातुओं का पुरातात्विक अध्ययन किया।

एस0 वी0 देव (1978) ने दक्कन महापाषाणीय संस्कृत से संबंधित कब्रों व आवासीय बस्तियों का तीन भिन्न–भिन्न चरणों में अध्ययन किया। इसके अतिरिक्त के0पी0 राव (1989) महोदय ने महापाषाणिक संस्कृति से जुड़े खगोलीय परिप्रेक्ष्यों का अध्ययन किया है। उत्तर भारत, मध्य भारत मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ तथा विंध्य क्षेत्र महापाषाणिक संस्कृति से जुड़े व्यापक लेखन कार्य हुए हैं। सी0वी0एफ0 हेमनडॉर्फ (1952) महोदय ने 'द प्रॉब्लम ऑफ मेगालिथक कल्चर ऑफ मिडिल इण्डिया' नाम के

लेख में मध्य भारत के महापाषाणिक परंपरा एवं उनसे जुड़े विश्वासों का अध्ययन किया है।

इसके अतिरिक्त जे0 डी0 बेग्लर ने 'ए टूर इन सेन्ट्रल प्रोविन्स' तथा एम0 जी0 दीक्षित महोदय ने भी 'एक्सकेवशन एट धनौरा डिस्ट्रिक' नामक पुस्तक में मध्य भारत के महापाषाणिक गतिविधियों को विश्लेषण किया। वी0 इल्विन, ए0के0 शर्मा ने भी छत्तीसगढ़ के महापाषाणिक संस्कृति का अध्ययन किया।

उत्तर भारत के महापाषाणिक संस्कृति का अध्ययन बी0 के थापर (1962), लेस्निक (1975), जी0 आर0 शर्मा ने 'मेगालिथ कल्चर ऑफ नॉर्दन इण्डिया' तथा ए0के0 शर्मा महोदय ने भी उत्तर भारत व विंध्य क्षेत्र के महापाषाणिक संस्कृति का अवलोकन किया। विंध्य क्षेत्र के महापाषाणिक संस्कृति पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा विविध दक्षिण उत्तर प्रदेश के महापाषाणिक संस्कृति से जुड़े कब्रगाहों का उत्खनन कार्य कराया गया है। उड़ीसा के हो जनजाति से संबंधित महापाषाणिक संस्कृति का उल्लेख बी0के0 मोंहता ने किया। छोटानागपुर पठारी क्षेत्र से संबंधित मुंडा, हो, उरॉव तथा असुर जनजातियों द्वारा आचरण में लाये जा रहे महापाषाणिक संस्कृति का उल्लेख ई0 टी0 डाल्टन (1875), एस0सी0 रॉय (1912) व अन्य महत्वपूर्ण विद्वानों ने किया।

भारत के उत्तरी–पूर्वी राज्य से संबंध रखने वाले राज्यों में यथा आसाम, मणिपुर व सिक्किम तथा नागालैण्ड के महापाषाणिक संस्कृति का वर्णन टी0सी0 हस्डन व हट्टन तथा विनोदिनी देवी (1993) द्वारा किया गया है।

अध्याय–द्वितीय

शोध प्रविधि एवं शोध क्षेत्र

(छोटा नागपुर पठार की भौगोलिक संरचना)

अध्याय–द्वितीय

शोध प्रविधि एवं शोध क्षेत्र (छोटा नागपुर पठार की भौगोलिक संरचना)

शोध प्रविधि–

पुरातात्विक अध्ययन इस मूलभूत कार्य पर केन्द्रित है कि सर्वप्रथम प्राचीन पुरावशेषों एवं भौतिक वस्तुओं को संग्रहित करना तथा समाज के लिए उन्ही पुरावशेषों एवं संग्रहित भौतिक वस्तुओं की निहितार्थता व प्रासंगिकता की समग्र व्याख्या करना है, जो उस समाज का ही भौतिक उत्पाद रहा हैं। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक तथ्यों एवं सांस्कृतिकों आयामों के अंतर्गत मानवीय व्यवहार का भी ज्ञान–मीमांसा करना है। पुरातात्विक अध्ययन इस प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ है कि 'प्राचीन समाज मूलतः क्या था'? किन्तु पुरातात्विक अध्ययन से यह अवश्य ज्ञात होता है कि 'प्राचीन समाज के लोग किन भौतिक संस्कृतिक का मानवीय व्यवहार में प्रचलन में ला रहे थे।

पुरातत्वविद् इन दो तकनीकी अवधारणात्मक प्रश्नों पर भी बल देते है कि ''प्रथम, पुरातात्विक साक्ष्य अतीत के विषय में क्या सिखाती है और दूसरा, पुरातात्विक साक्ष्य अतीत की गलतियों को किस तरह परिभाषित करती है? पुरातत्व की भाषा में इसे आलोचनात्मक सिद्धांत के नाम से भी जाना जाता है। पुरातत्व के आलोचनात्मक सिद्वांतविद् वर्तमान समाज के व्यवहार एवं क्रियाविधि के पीछे निहितार्थ आधारभूत मंशा की खोज कर अतीत की व्याख्या करता है। तथापि आलोचनात्मक पुरातात्विक सिद्वांत भौतिक संस्कृति एवं मानव व्यवहार के बीच सीधे व प्रत्यक्ष व्याख्यात्मक संबंधों को भी नकारता है। साथ ही यह स्वीकारता है कि अतीत संस्कृति एवं प्राप्त पुरावेषों के बीच अन्योनाश्रय संबंध है संस्कृति ही भौतिक वस्तुओं की उत्पादक है, और भौतिक वस्तुओं से ही संस्कृति की विशेष पहचान स्थापित होती है।

वही ऐतिहासिक पुरातत्व, पुरातात्विक साक्ष्यों के आलोक में घटनाओं और वस्तुओं के संबंधों की समग्र परिभाषा का अध्ययन करती है। ऐतिहासिक पुरातात्विक

अध्ययन अतीत से जुड़े घटनाओं और प्राप्त भौतिक वस्तुओं के आधार पर अध्ययन को बल देती है। उदाहरण के तौर पर किसी सभ्यता के उत्थान में कौन–कौन से भौतिक कारक उत्तरदायी रहे, वहॉ के लोगों की संघर्षात्मक प्रकृति कैसी थी, भिन्न उपकरणों का प्रयोग करते थे। मृत मनुष्य को कैसे दफनाया जाता था तथा किसी सभ्यता का अंत किन भौगोलिक एवं अन्य भौतिक कारणों से संभव हुआ?

इस प्रकार पुरातात्विक अध्ययन का वैज्ञानिक व ऐतिहासिक अध्ययन का आशय सामाजिक परंपराओं को समझने के लिए अतीत मानवीय व्यवहार की व्याख्या करना, तथा अनुभवजन्यात्मक साक्ष्यों के आधार पर स्मृति अवशेषो, पुरावशेषों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करता है।

- **परिकल्प–निग्मनात्मक विधि–**

पूर्व के अध्ययन से व अनुभवों से प्राप्त सिंद्वातों के आधार पर सर्वप्रथम परिकल्पना निर्मित की जाती है। निर्मित परिकल्पना के आधार पर संबंधित शोध क्षेत्र से डाटा का संग्रह किया जाता है। डाटा संग्रह करने के लिए अवलोकन विधि, उत्खनन विधि सर्वेक्षण विधि या फील्ड वर्क संबंधी अन्य विधियों का सहारा लिया जाता है। प्राप्त डाटा का विश्लेषण व परीक्षण किया जाता व निर्मित परिकल्पना की जॉच की जाती है। यदि जॉच में परिकल्पना की पुष्टि सही होती है तो परिकल्पना को स्वीकार कर लिया जाएगा। इसका आशय यह नहीं कि निर्मित परिकल्पना से पुष्टि की गई सिद्वांत पूर्णतयः सत्य ही हो। संभवतः यह अक्षरशः सत्य न हो लेकिन पुष्टि से प्राप्त सिद्धांत बहुत हद तक संभावित रूप से सही होने की गुजांइश होती है।

यदि डाटा के विश्लेषण से परिकल्पना की जॉच के दौरान निर्मित परिकल्पना की पुष्टि गलत होती है तो प्राप्त डाटा के ही आधार पर हम वैकल्पिक परिकल्पना निर्मित करते है और नवीन निर्मित परिकल्पना के आधार पर पुनः डाटा का संग्रह किया जाता है। इस प्रकिया को **'ब्रिंजिग आग्रयुमेंट'** कहा जाता है। इसमें परिकल्पना व डाटा के मध्य निरन्तर संवाद तब तक चलता है, जब तक कि ब्रिंजिग गैप या पुल को पूरी

तरह भरा ना जाये। तथा परिकल्पना व डाटा के मध्य के बीच में संवाद तब तक चलती है, जब तक हम सही निष्कर्ष तक न पहुॅच जायें। इसमें शून्य परिकल्पना की संभावना न के बराबर होती है।

परिकल्प–निग्मनात्मक विधि से अध्ययन में वैज्ञानिकता की संभावना में संवृद्धि करती है। इस अध्ययन का सकारात्मक पक्ष यह है कि केवल डेटा संग्रह के आधार पर परिकल्पना को स्वीकार करने की अवांछनीय रिस्क को कम करता है। इससे निर्मित परिकल्पना को अस्वीकार करने तथा डेटा के आधार पर वैकल्पि परिकल्पना को पुनः निर्मित करने के लिए प्रोत्साहित करती है। उपरोक्त लेख **ई0बी0 बेनिंग** की पुस्तक **'द आकार्योलॉजी लेबरोटरी'** के अध्यन से प्राप्त लेखन का संग्रह है।

वस्तुतः जब पुरातात्विक साक्ष्यों के अध्ययन में उत्खनन का अभाव हो या शोध कार्य का बिखराव जैसे जटिल समस्या को स्पष्टता प्रदान करनी हो, इस कार्य में परिकल्प–निगमनात्मक' विधि की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। छोटानागपुर क्षेत्र से संबंधित महापाषणिक पत्थरों के पुरातात्विक अध्ययन में उत्खनन का अभाव, क्षेत्र में विविधता व साक्ष्यों के विखराव के कारण परिकल्प–निगनात्मक विधि शोध कार्य के लिए उपयोगी शोध विधि की भूमिका निभाता है, जिससे प्रश्नों के वैज्ञानिक व व्यवस्थित निष्कर्ष तक पहुॅचा जा सके।

- **मध्य श्रेणी सिद्धांत–**

समाजशास्त्री **रार्बट मर्टेन** ने सिद्धांत और अनुभवजन्य अनुसंधान के मध्य के मार्ग को **'मध्य श्रेणी सिद्धांत'** की संज्ञा दी। एक ओर टॉलकोट्ट पार्सन द्वारा 'वृहद अध्ययन पर आधारित समाज के समस्त विविधताओं के संपूर्णतः समावेशित करने वाले मत' तथा 'लघु अध्ययन में संम्मिलित समाज के किसी एक वर्ग, जाति, लिंग या समदुाय पर आधारित मत, इन दोनों सिद्धांतों के मध्य मार्ग के सिद्धांत को राबर्ट मर्टेन द्वारा समाजशास्त्रीय अध्यन को वैज्ञानिक प्रदान करने के लिए नवीन सिद्धांत प्रतिपादित किया।

इस प्रकार वृहद सिद्धांत वृहद अध्ययन पर आधारित होते है। जैसे सामाजिक समुदाय, सामाजिक संगठन इत्यादि तथा लघु या सूक्ष्म सिद्धांत लघु अध्ययन आधारित होते है, जैसे समाज की कोई एक इकाई, एक व्यक्ति, एक वर्ग, एक जाति या एक लिंग इत्यादि। जबकि मध्य–सीमा सिद्धांत इन दोनों प्रकार के अध्ययनों के बीच की श्रेणी पर आधारित होते हे। साथ ही, विस्तृत अध्ययन का दृष्टिकोण विस्तृत तथा सूक्ष्म अध्ययनों में इन दोनों के समन्वित दृष्टिकोण को समाहित किया जाता है। उदाहरण के लिए सामाजिक गतिशीलता, संदर्भ समूह, भूमिका संघर्ष और सामाजिक मानदंड़ों के गठन समाहित है।

रार्बट मर्टेन अपने पुस्तक **'सामाजिक सिद्धांत एवं सामाजिक संरचना'** में कहते है कि ''मध्य–सीमा सिद्धांत वे है, जो कि राजमर्रा के शोध में प्रचुर मात्रा में प्रकट होने वाली लघु परन्तु कार्यवाहक उपकल्पनाओं एवं दूसरी ओर सामाजिक व्यवहार, सामाजिक संगठन व सामाजिक परिवर्तन के समस्त अवधारणाओं को व्याख्या करने वाले एक समन्वित सिद्धांत को विकसित करने हेतु व्यवस्थित प्रयास के बीच में स्थित होते है।''

पुरातत्व मे भी संपूर्णता के अध्ययन को केवल भौतिक अवशेष के आधार पर नहीं स्वीकारा जाता। पुरातत्व में उत्खनन पर नहीं स्वीकारा जाता। पुरातत्व में उत्खनन से प्राप्त सामग्री किसी एक समुदाय, एक काल, एक संस्कृति को परिलक्षित करती हैं। वस्तुतः पुरातत्व अध्ययन में मध्य–श्रेणी सिद्धांत अध्ययन को गतिशीलता देने में कारगर साधन है।

मध्य–श्रेणी सिद्धांत को पुरातत्व के क्षेत्र में प्रयोग करने का श्रेय **लुईस आर0बिनफोर्ड** को जाता हैं। पुरातत्व में, यह सिद्धांत पिछले सांस्कृतिक प्रणालियों में निर्दिष्ट गुणों की पहचान करता है।

1970 के दशक में पुरातत्वविद् लुईस बिनफोर्ड के द्वारा पुरातत्व के अध्ययन में 'मध्य श्रेणी के सिद्धांत' का प्रतिपादन किया। यह सिद्धांत वर्तमान में जीवित नृजातीय

प्रजातियों के सामाजिक व्यवहार के आधार पर अतीत के परंपराओं का प्रक्रियात्मक अध्ययन करती है। बिनफोर्ड यह मत देते है कि ''मध्य श्रेणी शोध पुरातत्व के आधारभूत समस्याओं को संबोधित कर सकता है।'' पुरातत्वविद् प्रायः भौतिक साक्ष्यों के आधार पर सामाजिक व्यवस्था के मानवशास्त्रीय सिद्धांतों की व्याख्या करता है, वही यह सिद्धांत भौतिक संस्कृति के प्रतिमान का पुरातात्विक विश्लेषण को न साथ न मानवीय व्यवहार के अध्ययन को अधिक प्रेरित करती है।

- **ऐतिहासिक अनुसंधान विधि–**

ऐतिहासिक अनुसंधान विधि का मूलतः संबंध अतीत की घटनाओं से हैं। शोधकर्ता यह प्रयत्न करता है कि अतीत की घटनाओं के संदर्भ में व्यापक जानकारी अर्जित करे। प्राप्त डाटा एवं तथ्यों की सत्यता एवं विश्वसनीयता की जॉच करें एवं वर्तमान में रहकर अतीत की घटनाओं का व्यवस्थित व वैज्ञानिक विश्लेषण करे। हालांकि इस अनुसंधान पद्धति में वस्तुनिष्ठता का अभाव अवश्य होता है। किन्तु अतीत के संदर्भ में एक अनुमानित किन्तु वैज्ञानिक परक माध्यम से अतीत का सटीक आकलन करना, ऐतिहासिक अनुसंधान विधि है। **जॉन डब्ल्यू बेस्ट** के अनुसार ''ऐतिहासिक अनुसंधान का सम्बन्ध ऐतिहासिक समस्याओं के वैज्ञानिक विश्लेषण से है, जिसके विभिन्न पद भूत के सम्बन्ध वर्तमान और भविष्य से होता है''। **करलिंग** के अनुसार, ''ऐतिहासिक अनुसंधान का तर्क संगत अन्वेषण हैं। इसके द्वारा अतीत की सूचनाओं एवं सूचना सूत्रों के संबंध में प्रमाणों की वैधता का सावधानीपूर्वक परीक्षण किया जाता है और परीक्षा किये गये प्रमाणों की सावधानीपूर्वक व्याख्या की जाती है''।

अध्ययन कार्य में ऐतिहासिक अनुसंधान पद्धति के महत्व को कम नही आंका जा सकता। जिस प्रकार छोटानागपुर सं संबंधित जनजातियॉ जीवित महापाषाणिक परंपरा का अनुपालन कर रही है, वस्तुतः पूरे परंपरा का सर्वांगीण अध्ययन हेतु ऐतिहासिक अनुसंधान पद्धति अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रविधि है। इसके लिए प्राथमिक स्रोत एवं द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से डाटा और तथ्यों का संग्रह किया जायेगा तथा संबंधित शोध

समस्या का विश्लेषण कर अतीत के संदर्भ में एक अनुमानित किन्तु वैज्ञानिक अध्ययन को कर संभावित अतीत परंपरा के विभिन्न आयामों का अध्ययन करना शामिल है।

शोध क्षेत्र

छोटा नागपुर पठार की भौगोलिक संरचना

झारखंड राज्य अपनी खनिज–संपदा के समृद्ध अवयव के रूप में पहचाना जाता है। छोटा नागपुर पठार इसी झारखंड प्रदेश का अखंड हिस्सा हैं, जो प्रायद्वीपीय पठार का भाग हैं। छोटानागपुर का पठार ही झारखंड के प्राकृतिक सौंदर्य एवं भौतिक समृद्धता का अन्नय कारण हैं। छोटानागपुर पठार की अपनी पृथक भौगोलिक विशेषताएं हैं, जो अपनी समस्त विविधताओं यथा (मानसून, जलवायु, प्रजाति एवं खनिज) के कारण प्राचीन काल से औपनिवेशिक काल तक विभिन्न गतिविधियों का केंद्र रहा है।

छोटानागपुर पूर्वी भारत का पठार है, यह केन्द्रीय उच्च भूमि (सेंट्रल हाइलैंड) का पूर्वी विस्तार है। केन्द्रीय उच्च भूमि का पठारीय भाग मालवा पठार, बुंदेलखंड पठार, बघेलखंड तथा पूर्वी भारत तक इसका क्रमिक विस्तार छोटानागपुर पठार और उत्तर–पूर्व में मेघालय के पठार तक विस्तृत रूप में फैला है। छोटानागपुर का पठार **झारखंड** के अतिरिक्त **पश्चिम बंगाल, उड़ीसा** और **छत्तीसगढ़** तक के व्यापक क्षेत्र को अच्छादित करता है। इसके उत्तर में सिन्धु–गंगा (**'इंडो–गंगेटिक'**) मैदान, दक्षिण में **'महानदी'** नदी तथा पश्चिम में **'सोन नदी घाटी'** अवस्थित है।

चित्र संख्या 2.1 छोटानागपुर क्षेत्र का भौगोलिक नक्शा

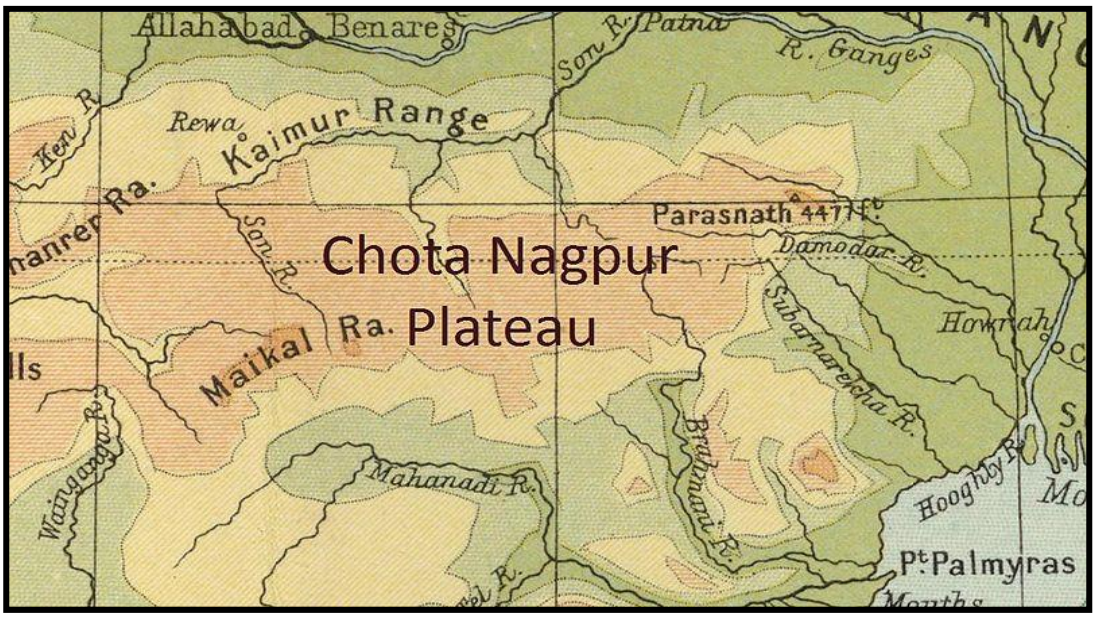

स्रोत–वेब लिंक–1

एस. पी. चटर्जी के अनुसार "छोटानागपुर का पठार **उत्तर** में संथाल परगणा के अतिरिक्त राजमहल की पहाड़ियों को, दक्षिण में रांची व सिंहभूम क्षेत्र को तथा **पश्चिम** में पलामू क्षेत्र को तथा **दामोदर घाटी** क्षेत्र में हजारीबाग तथा धनबाद तक एक लंबे भौगोलिक क्षेत्र में विकेंद्रित है। **(आर. एल. सिंह, 1971)**

छोटानागपुर का संपूर्ण पठार **65,000** वर्ग किलोमीटर के दायरे में फैला है। इसका भौगोलिक स्वरूप 22° उत्तर से 25°30′ उत्तरी अंक्षाशीय तक तथा 83° 47′ पूर्वी से 83° 50′ देशांतरीय तक भारतीय मानचित्र में दर्शाया गया है। **(शलाम, 1996)**

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं नामकरण –

छोटानागपुर के संदर्भ में लिखित व साहित्यिक साक्ष्य के अल्प प्रमाण मिलते हैं, वस्तुतः छोटानागपुर की ऐतिहासिकता को पुनर्निर्मित करने के लिए यहां के लोगों द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाले प्रागैतिहासिक काल के पत्थर, औजारों, धात्विक औजारों, तथा महापाषाणिक–संस्कृति जैसे पुरातात्विक स्रोतों पर हमारी निर्भरता अधिक है।

तुलनात्मक रूप से पुरातात्विक स्रोत छोटानागपुर क्षेत्र के अंधकारमय इतिहास को पुनर्निर्माण करने में सर्वाधिक सहायता प्रदान करता है। यद्यपि इस बात को भी स्वीकार करना होगा कि प्राचीन काल से ही छोटानागपुर विभिन्न गतिविधियों का केंद्र रहा है, जिसका उल्लेख तत्कालीन पुस्तकों (साहित्य स्रोत) एवं भिन्न–भिन्न समय में विदेशी यात्रियों के आगमन एवं उनके द्वारा लिखित 'स्मृति संस्मरण' में छोटानागपुर यथा झारखंड का उल्लेख मिलता है।

'नागपुर' शब्द से संभवतः नागवंशी शासकों के नाम पर लिया गया जो मध्यकाल में छोटानागपुर क्षेत्र में शासन करते थे। हालांकि प्रारंभ में छोटानागपुर का संदर्भ केवल रांची से था, जो वर्तमान में झारखंड राज्य की राजधानी है। मध्यकाल में राँची को **'कोकरह'** के नाम से जाना जाता था। राँची के ही एक छोटे से गांव का नाम 'चुटिया' था। इस गांव में नागवंशियों का एक किला था, समय दर समय चुटिया शब्द का अपभ्रंश रूप ही 'छोटा' हुआ तथा इस प्रदेश शासन करने वाले (नागवंशियों) लोगों के नाम पर यह क्षेत्र 'छोटानागपुर' कहलाने लगा। प्रारंभ में केवल रांची का एक छोटा भाग ही 'नागपुर' या छोटा नागपुर कहा जाता था। सन् 1812 ई0 के पश्चात् यह सम्पूर्ण इसके छोटानागपुर के अधित्यका कर दिया। **(वि. विरोत्तम, 2017)**।

झारखंड का वह क्षेत्र जो आज **छोटानागपुर** के नाम से जाना जाता है। प्रारंभिक संस्कृत साहित्यों, प्रारंभिक विदेशी मंत्रियों के वर्णनों और मध्यकालीन फारसी इतिहास–ग्रंथों में विभिन्न नामों से चर्चित हुआ है। **(वि. विरोत्तम, 2017)**

यूनानी लेखक **प्लिनी** ने लिखा है कि पाटलिब्रोथ्रिस (पाटलीपुत्र) से सुदूर दक्षिण में 'मोनेडेस' और सुआरी कहे जाने वाले लोग रहते थे। इसके अतिरिक्त गुप्त काल में भारत भ्रमण पर निकले चीनी यात्रियों जैसे **'फाह्यान'** एवं **'हवेनसांग'** ने झारखंड (छोटानागपुर) के लिए क्रमशः **'कुक्कुट–लाड'** एवं **'कर्णसुवर्ण'** जैसी शब्दावली का उल्लेख भी छोटानागपुर के संदर्भ में ही किया है। वैदिक साहित्य में कहीं भी छोटानागपुर क्षेत्र का कोई विशेष उल्लेख नहीं मिलता है किंतु महाभारत महाकाव्य में

दिग्विजय–पर्व में इस क्षेत्र के लिए **'पुंडरिक देश'** के नाम का उल्लेख हुआ है। महाभारत में वर्णित पशुभूमि भी संभवत झारखंड ही है। **(वि. विरोत्तम, 2017)**। शरद चंद राय का कथन है कि झारखंड के अनेक स्थानों में नाम के साथ 'भूम' शब्द जुड़ा है जैसे–मानभूम, सिंहभूम, मल्लभूम, धालभूम इत्यादि। 'रसिक मंगल' में छोटानागपुर 'नागभूम' के रूप में नाम पुकारा गया है। (रॉय, 1912)

छोटानागपुर क्षेत्र वनों से अच्छादित व प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण है। मौर्य काल में अशोक ने क्षेत्र के जंगलों का प्रयोग अपने सामारिक स्थिति को मजबूत करने हेतु प्रयोग किया। उसने (अशोक) ने अपने 13वें शिला–लेख में इस क्षेत्र का **'आटवी'** प्रदेश के रूप में उल्लेख मिलता है। **डी. आर. भंडारक** महोदय ने आटवी प्रदेश का विस्तार बघेलखंड (उड़ीसा) तक बताया। यह क्षेत्र (बघेलखंड) छोटानागपुर का पठार का सीमांत क्षेत्र है। इन आरविक जातियों के बारें में हमें समुद्रगुप्त के अभिलेख प्रयाग प्रशस्ति में भी वर्णन प्राप्त होता है।

मौर्य काल से संबंधित पुस्तक अर्थशास्त्र में कौटिल्य ने इस क्षेत्र को **'कुकुट देश'** के रूप प्रयोग किया। छोटानागपुर क्षेत्र में मौर्योत्तर शासकों यथा रोमन, सिथियन, कुषाणों के भी स्पष्ट प्रभाव के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। उदाहरण स्वरूप रांची जिले से कनिष्क के सिक्कों के प्रमाण मिलते हैं, जो लगभग द्वितीय शताब्दी के सिक्के हैं। इंडोसिथियन के सिक्के सिंहभूम क्षेत्र से प्राप्त होते हैं। कालांतर में बंगाल से सटे होने के कारण छोटानागपुर क्षेत्र पर पाल वंश का भी अधिपत्य स्थापित था। चतरा जिले के इटखोरी मंदिर से प्राप्त मूर्ति के साक्ष्य, बौद्ध मूर्तियों के साक्ष्य तथा खुदाई से प्राप्त अवशेष से प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि इस क्षेत्र पर पालवंश का प्रत्यक्ष प्रभाव था। छोटानागपुर खास में नागवंशियों का, पलामु में रक्सेल वंश का मानभूम क्षेत्र में मान राजा (पंचेत राज्य) सिंहभूम के पोरहट में सिंह वंश जैसे क्षेत्रीय शासकों का शासन स्थापित था। मुगल काल में मुगलों के आक्रमण से बचने के लिए अफगानों ने झारखंड के वनों का प्रयोग छिपने तथा आश्रय स्थल के रूप में किया। स्वयं शेरशाह ने इस क्षेत्र का कई बार प्रयोग छिपने के उद्देश्य से किया।

छोटानागपुर का पलामू **'सफेद हाथियों'** के लिए विख्यात था। **'अहमद यादगार'** नामक लेखक ने यह वर्णन किया कि शेरशाह का इस प्रदेश पर आक्रमण करने का उद्देश्य 'सफेद हाथी' प्राप्त करना था। वहीं अकबर काल में अकबर ने अपने सैनिकों को **'कोकरह'** क्षेत्र में प्रसिद्ध 'हीरे' की सत्यता का पता लगाने के लिए भेजा था। 'कोकरह' के शंख नदी से 'हीरे' मिलने के प्रमाण मिलते हैं। (विरोत्तरम, 2017)

मध्य काल के इतिहासकारों ने झारखंड का उल्लेख किया है झारखंड का नाम का उल्लेख सिराज अफीफ, सल्लिमलीउल्ला तथा गुलाम हुसैन ने अपने ग्रंथों में किया है। कबीर दास ने अपने दोहे में झारखंड का उल्लेख तथा मोहम्मद जायसी ने भी 'पद्मावत' में झारखंड का उल्लेख किया है।

झारखंड के अतिरिक्त छोटा नागपुर एवं विभिन्न जिलों को भी भिन्न–भिन्न नामों से जाना जाता रहा है, वर्तमान रांची जिले वाला भूखंड प्राचीन काल में **'कर्कखंड'** भी कहा जाता था। कर्कखंड नागो (नागवंशियों) की भूमि थी जो बाद में **'कोकरा'** के नाम से जाता था। कोकरा शब्द राँची के संदर्भ के रूप में अबुल फजल द्वारा लिखित फारसी ग्रंथ आइन–ए–अकबरी में उल्लेखित है। तुजुक–ए–जहांगीरी में इस शब्द का प्रयोग 'खोखरा' नाम का प्रयोग किया है **(वि. विरोत्तम, 2017)**।

इसके पश्चात् मराठों ने भी छोटानागपुर क्षेत्र के वनों का प्रयोग किया तथा इस क्षेत्र के क्षेत्रियों शासकों को पराजित करने में सफलता प्राप्त की। हालांकि यह सफलता अस्थाई थी और इसका एकमात्र उद्देश्य क्षेत्रीय शासकों से कर प्राप्त करना था। औपनिवेशिक काल में भी आलमशाह द्वितीय ने 1765 में बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दिवानी अंग्रजों को प्रदान की तो ईस्ट इंडिया कंपनी का छोटानागपुर पर प्रत्यक्ष अधिकार स्थापित हुआ। बंगाल के साथ–साथ इस क्षेत्र पर भी ईस्ट इंडिया कंपनी ने 'स्थाई बंदोबस्ती' कर अधिरोपण किया। इसके पश्चात् स्थानीय जनजातियों में दिकुओ (बाहरी लोग) जमीदारों के प्रति असंतोष की भावना पनपी, जिसका एकमात्र कारण 'छोटानागपुर' क्षेत्र के जनजातियों को उसकी भूमि से बेदखल करना तथा

अत्यधिक कर अधिरोपण करना था। इन असंतोषों का परिणाम भिन्न–भिन्न विद्रोहों के रूप में अभिव्यक्त हुआ, जिनमें कोल विद्रोह (1832) भूमिज विद्रोह एवं संथाल विद्रोह (1855) मुख्य रूप से सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं **(वि. विरोत्तम, 2017)।**

12 दिसंबर, 1912 ई0 को ब्रिटिश राजशाही के द्वारा **'लेफ्टिनेंट गवर्नर इन काउंसिल'** के देख–रेख में एक पृथक प्रावधान की घोषणा की गई। **जिसमें बिहार, उड़ीसा और छोटानागपुर क्षेत्र को बंगाल से पृथक घोषित कर दिया गया।** (सन् 1914 नवम्बर) ई0 को चतरा सबडिवीजन के अंतर्गत विभिन्न थानों यथा सीमरिया, हंटरगंज तथा चौपारण आदि थानों का निर्माण किया गया जिसका मुख्यालय चतरा बना। सन् 1938 में उड़ीसा को एक पृथक रियासत (प्रांत) घोषित किया गया। वहीं हजारीबाग को छोटानागपुर डिविजन का ही हिस्सा माना गया।" (रांची गजेटियर) इन तथ्यों से प्राप्त जानकारी से यह पुष्टि होता है कि ब्रिटिश भारत में छोटानागपुर को बंगाल से एक पृथक डिविजन के रूप में निर्मित किया गया था (बिहार डिस्ट्रिक गजेटियर, रॉची : एन0 कुमार, 1970)।

छोटानागपुर क्षेत्र के पृथक निर्माण के संदर्भ में महोदय **एस. सी. राय** का कथन इस प्रकार है कि "छोटानागपुर नाम एक प्रकार का तुलनात्मक तत्कालीन उत्पत्ति है, जो आरंभिक ब्रिटिश शासन के एक सिक्के से स्पष्ट होता है, जिसमें इस क्षेत्र को मराठा शासित नागपुर क्षेत्र से पृथक माना गया है। (बिहार डिस्ट्रिक गजेटियर, हजारीबाग : चौधुरी, 1957)।

छोटानागपुर पठार का भू–तात्विक निर्माण –

छोटानागपुर पठार का भू–तात्विक निर्माण 25 करोड़ वर्ष पूर्व मध्यजीवी महाकल्प (Era) ट्रिआसिक, जूरैसिक एवं क्रिटेशियन कल्प (Period) के दौरान विभिन्न चरणों में महाद्वीपीय उत्थान (UP Lifiting) के फलस्वरूप निर्मित हुई हैं (सिंह, 1971)। उस दौरान होने वाले भू–गर्भिक परिवर्तन एवं परिस्थितकी तंत्र के विस्थापन से अनेक परिवर्तन हुए। प्रथम, जीवाश्म के दब जाने से प्राकृतिक संसाधनों का निर्माण तथा दूसरा, ज्वालामुखी विस्फोट से विभिन्न प्रकार के अवासादी चट्टान व रूपान्तरित चट्टानों का निर्माण हुआ। इन चट्टानों के निर्माण के परिणाम स्वरूप छोटानागपुर क्षेत्र में खनिजों में विविधता देखने को मिलती है जिनमें धात्विक व अधात्विक दोनों प्रकार के खनिजों की अधिकता है। इन खनिजों एवं खनिजों की प्राप्ति से जुड़े छोटानागपुर के विभिन्न क्षेत्र के संदर्भ का उल्लेख पृथक रूप से आगे किया जायेगा।

विदित है कि छोटानागपुर का पठार महाद्विपीय पठार है जो दक्कन (प्रायद्विपीय) प्लेट का अन्नय भाग है, यह 20 करोड़ वर्ष क्रेटियस कल्प के दौरान यूरेशियन महाद्वीप के आपस में टकराहट के फलस्वरूप यह भाग पूर्वी भारत का हिस्सा बना। वही इसका दूसरा विभक्त भाग उत्तर पूर्व के दक्कन क्षेत्र में दक्कन या प्रायद्विपीय पठार कहलाया।

स्रोत–वेब लिंक–2, भारत के सन्दर्भ में पठारी क्षेत्रों का भौगोलिक विवरण

छोटानागपुर क्षेत्र में मुख्य रूप से **आरकेन, ग्रे गोंडवाना** चट्टानों के सम्मिश्रण से घिरा क्षेत्र है। वस्तुतः छोटानागपुर पठार के भू–विज्ञान में जटिलता व विविधता पायी जाती है। छोटानागपुर का जटिल भू वैज्ञानिक संरचना इस भाग की मुख्य विशेषता है, आर. एल. सिंह ने अपने पुस्तक क्षेत्रीय भारत का भूगोल (Regional Geography of India) में वर्णन किया है कि

"बायोलिथिक श्रृंखला के हस्तक्षेप से ग्रेनाइट का परिवर्तन धाड़वाड़ स्तर में होता है, यह तीव्र रूपांतरण ओर्जेनैटिक गतिविधि के कारण हुआ, जो इस क्षेत्र को संरचनात्मक आधार प्रदान करता है।"

दामोदर घाटी में **गोंडवाना** चट्टानों की अधिकता है। जिसमें बलुआ पत्थर के साथ (स्लेट और क्ले) तत्वों का सम्मिश्रण है, जिससे एक मजबूत गोंडवाना परत का निर्माण होता है **(आर. एल. सिंह, 1971)** पश्चिम रांची में स्थित पाट पठार (Pat Land), पश्चिम मारजीन के पूरे क्षेत्र को दक्कन ट्रैप से घेरता है। यह दक्कन ट्रैप अपक्षय के कारण लेटेराइट और बॉक्साइट में परिवर्तित हुआ। छोटानागपुर पठार के उत्तर–पूर्वी सीमा में अवस्थित **राजमहल की पहाड़ियों लावा प्रवाह** से ढका है, जो कि सम्भवतः आरंभिक हिमाचल निर्माण से जुड़ा था। राजमहल ट्रैप में डोलेराइट, बसाल्ट और एंडेसाइट प्राप्त होता है। वहीं डालेमा रेंज में 'आरकेन' प्रकार के चट्टानों की अधिकता है **(सिंह, 1971)।**

छोटा नागपुर पठार एक का यह भ–ूगर्भिक संरचना इस क्षेत्र के इतिहास के पुनर्निर्माण में सहायक है। छोटानागपुर के भू–विज्ञान के संदर्भ में **डन (Dunn)** महोदय ने एक व्यवस्थित मत प्रस्तुत करते हुए लिखा कि "जीनिसिक और ग्रैनिटिक पूर्व कैम्ब्रियन भूमि की सतह का निर्माण अनियमित अपरदन की प्रक्रिया के एक लम्बे अवधि के उपरांत हुई थी। हिमयुग में ऊपरी कार्बनिक कल्प (Car boniferous) के प्रमुख गर्त दोष के रुप में **दामोदर घाटी** पर्मियन अवधि में अस्तित्व में आया था। उस समय गोंडवाना चट्टानों ताजे पानी के झिलों में बह गयी थी। ट्रेरियासिक दिनों के गर्म रेगिस्तानी हालात में उत्थान हुआ था। जब 5000 फुट असंरक्षित गोंडवाना क्षेत्र को धकेला गया तो महादेव श्रृंखला (मध्य गोंडवाना) में बड़े पैमाने पर बलुआ पत्थर का निर्माण हुआ। यह परिघटना तृतीयक भू–गर्भिक गतिविधि के दौरान जुरासिक युग में ज्वालामुखी विस्फोट से हुआ **(डन, 1944)**।"

छोटानागपुर पठार का विभाजन –

छोटा नागपुर पठार दो उच्चावच (Relief) विविधता व प्राकृतिक विशेषताओं के कारण विभिन्न श्रृंखलाओं (पठारीय भाग) में विभक्त किया गया है। यद्यपि इन पठारीय भाग के विभाजन को लेकर भू–विज्ञानविद्ों में भिन्न–भिन्न मत हैं। **एस. पी. चटर्जी** के अनुसार छोटा नागपुर पठार के पेनिप्लेन को विशेष चारित्रिक गुणों के कारण चार निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है। (सिंह, 1971)

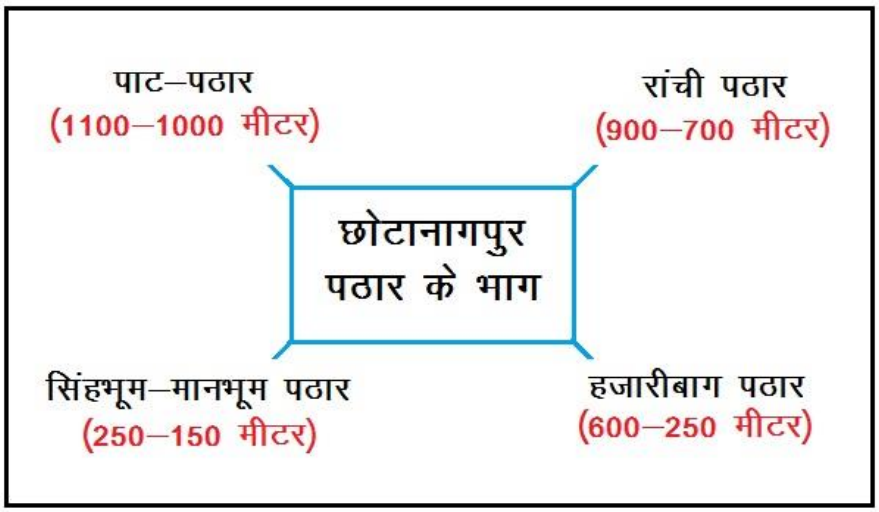

इसके विपरीत कई विद्वानों ने, जिनमें डन (Dunn) महोदय प्रमुख हैं, छोटानागपुर पठार को उच्चावच के आधार पर साधारणतया केवल तीन भागों में विभक्त किया गया है –

1. ऊपरी छोटानागपुर पठार–पाट पठार (1100–700 मीटर)
2. मध्य छोटानागपुर पठार–हजारीबाग पठार (600–250 मीटर)
3. निम्न छोटानागपुर पठार–सिंहभूम व मानभूम पठार (250–150 मीटर)

स्पष्ट है कि विद्वानों के बीच यह मत भिन्नता पाट–पठार और रांची के पठार के संदर्भ में माना गया है। पठारीय भाग को चार भागों में बांटने वाले समूहों ने पाट–पठार में पश्चिम रांची को तथा पलामू में कुछ क्षेत्र को भी सम्मिलित किया है। वस्तुतः

पाट–पठार को **'पश्चिमी पठार'** भी कहा गया वहीं रांची पठार को इससे इतर एक पृथक पठारीय भाग के रूप में संदर्भित किया है। इस अध्याय में छोटानागपुर पठार के भौगोलिक स्वरूप को केवल जानने के उद्देश्य पठार को उच्चावच एवं विविधता के आधार पर निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित किया गया है।

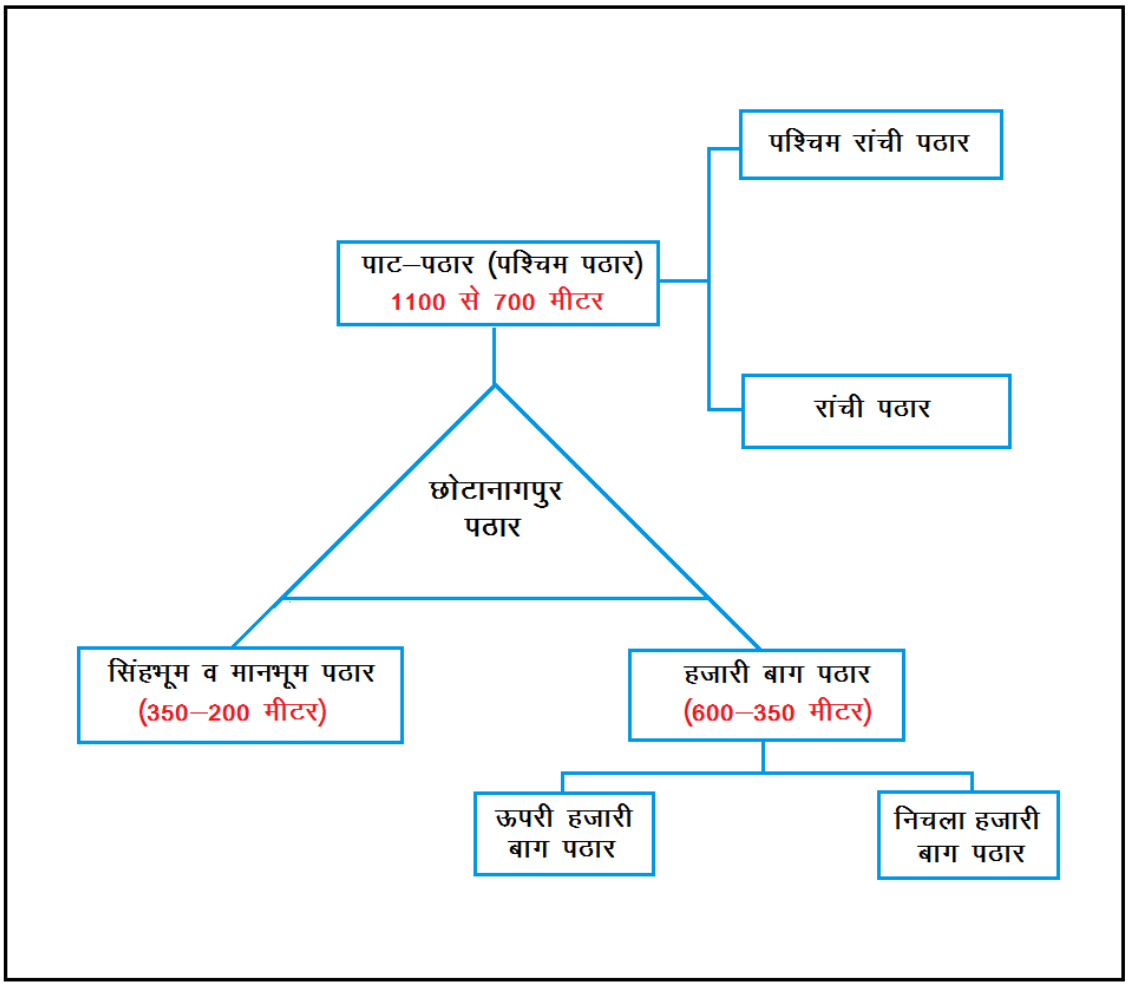

चित्र संख्या 2.3 उच्चावच से संबंधित क्षेत्र के ऊँचाई का उल्लेख

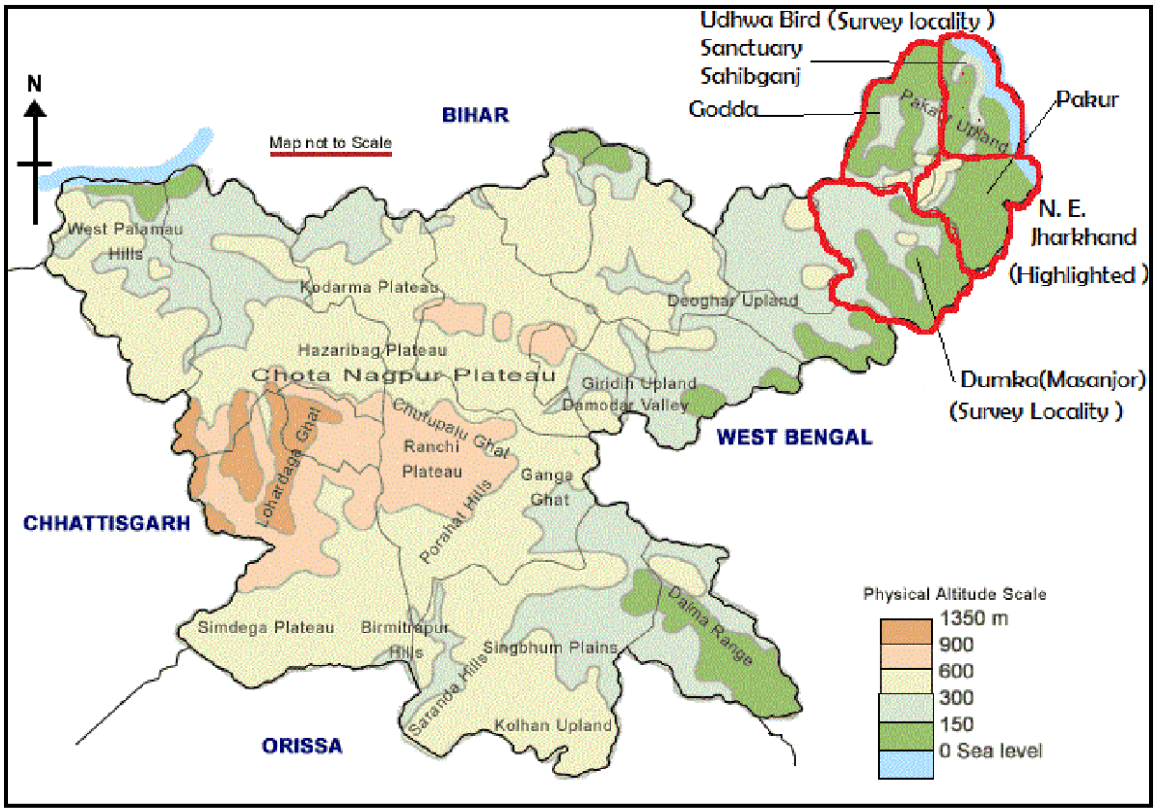

स्रोत–वेबलिंक–3

1. पाट–पठार –

इस पठार को पश्चिमी पठार भी कहते हैं। छोटानागपुर का यह सर्वाधिक उच्चावच (Relief) पठार है, जिसकी औसत ऊंचाई 1,000 मीटर (3,300 फीट) समुद्री स्तर के ऊपर हैं। इसके अंतर्गत छत्तीसगढ़ राज्य का सुरगुजा जिला भी सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त इस पठारीय भाग के अंतर्गत नेतरहाट, जमीरा, खमार, रुदनी आदि पाट–पठारीय भाग हैं। इसका निर्माण 'दक्कन बसाल्ट' लावा के फलस्वरुप हुआ है। इस पूरे पठार में रांची, दक्षिणी पलामू तथा कोल्हान भाग के सिंहभूम क्षेत्र में उत्तरी–पूर्व पहाड़ियां भी सम्मिलित हैं। **(डन, 1944)**

दामोदर नदी घाटी रांची पठार को हजारीबाग पद से पृथक करती है। रांची पठारी और हजारी बाग पठार के बीच गुजरने वाली या दोनों पठारीय भाग को पृथक

करने वाली दामोदर नदी घाटी यहां से रिफ्ट वैली के रूप में बहती है। पाट–पठार के अंतर्गत जहां पश्चिम रांची पठारीय भाग की औसत ऊंचाई 1000 मीटर (3300 फीट) है वही रांची पठार की औसत ऊंचाई तकरीबन 750–850 मीटर (2300 फीट) है।

2. हजारीबाग पठार –

दामोदर घाटी के उत्तर में हजारीबाग पठार स्थित है। उच्चावच के आधार पर हजारीबाग पठार दो भागों में विभाजित है। जहां हजारीबाग पठार 610 मीटर (2000 फीट) इस पठारीय भाग का ऊपरी हिस्सा है वहीं इसका दूसरा हिस्सा कोडरमा पठार है, जिसकी औसत ऊंचाई 350 मीटर (1000 फिट) हैं। असावा पहाड़ी (Hills)–751 मीटर, जिलिंगा पहाड़ी 932 मीटर, महाबार जरीमो (610 मीटर), बरसोत (670 मीटर) आदि हजारीबाग पठार के अंतर्गत आने वाली पहाड़ियां हैं।

हजारीबाग पठारीय भाग का उप–पठारीय हिस्सा **कोडरमा पठार** कहलाता है। यह हजारीबाग पठार का निचला हिस्सा है। इसके अंतर्गत कोडरमा, चौपारण व गिरिडीह क्षेत्र सम्मिलित हैं। इसकी औसत ऊंचाई लगभग 300 मीटर (950 फीट) है। कोडरमा पठार बिहार की सीमा से लगा क्षेत्र है। इस पठारी भाग के अंतर्गत बराकर नदी प्रवाह है जो निचला हजारीबाग कोडरमा व गिरिडीह से प्रवाहित होती है। **पारसनाथ की पहाड़ी** का उच्चावच पूरे छोटानागपुर पठार में सर्वाधिक है। इसकी औसत ऊंचाई 1,350 मीटर (4430 फिट) है। पारसनाथ की पहाड़ी गिरिडीह जिले में स्थित है।

3. सिंहभूम–मानभूम पठार –

यह छोटानागपुर पठार का सबसे निम्नतम उच्चावच वाला क्षेत्र है। सिंहभूम के अंतर्गत कोल्हान प्रमंडल में स्थित पूर्वी सिंहभूम, पश्चिमी सिंहभूम व चाईबासा जैसे क्षेत्र सन्नहित हैं। इसकी औसत ऊंचाई 300 मीटर (1000 फीट) है। मानभूम के अंतर्गत

आने वाले प्रमुख क्षेत्रों में झारखंड का धनबाद बोकारो जिला तथा पश्चिम बंगाल के पुरुलिया बांकुरा, झालदा, पंचकोट वाघमुंडी इत्यादि क्षेत्र सम्मिलित हैं।

नदी, झरना व जलप्रपात –

छोटानागपुर पठार के अंतर्गत कुछ नदियाँ पूरे वर्ष प्रवाहित होती हैं तो कुछ नदियां केवल मानसूनी हैं। इनमें प्रमुख नदियों के नाम हैं– उत्तरी कोयल, दक्षिणी कोयल, सुवर्णरेखा, कसाई, बराकर दामोदर, अजाई एवं ब्राह्मणी नदी इत्यादि (शोधगंगा)। इसके अतिरिक्त कई सहायक नदियां भी सम्मिलित हैं। उदाहरण के तौर पर खरकई, शंख, लिलाजन एवं मोहाना इत्यादि। छोटानागपुर पठार में दामोदर नदी सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इस नदी के जल का प्रयोग मुख्य तौर पर बिजली उत्पादन के लिए किया जाता है।

इन नदियों में कुछ जलप्रपात (Drainage) बेसिन को विकसित करती हैं। विशेषतौर पर राजमहल की पहाड़ियों से संबंधित अजाई, ब्राह्मणी और गुमानी नदियां प्रमुख हैं, जो पश्चिम बंगाल के दक्षिण पूर्वी दिशा की ओर समानांतर चैनल में जलनिकासी होती है। पठार के उत्तरी किनारे से भी अनेक छोटे–छोटे सहायक नदियां बिहार के दक्षिणी मैदान में बहने वाले पुनपुन व फलगू आदि नदियों में जाकर जल निकासी करती हैं। छोटा नागपुर पठार में अनेक झरने (नदियों के स्रोत) प्रवाहित होती हैं जिनमें मुख्य रुप से गौतम घाघ (36 मीटर), घाघरी (42 मीटर), बुरहाघाघ (40 मीटर), संडीघाघ (60 मीटर) इत्यादि पाट–पठारीय क्षेत्र से व हुंडरू (7 मीटर), दाशाम फॉल (39 मीटर) रांची पठारीय भाग से तथा मोतीझारा (45मीटर) राजमहल की पहाड़ियों से गिरती है। जल निकासी घनत्व बेसिन में अलग–अलग चयनित किया जाता है। सुवर्णरेखा बेसिन का सबसे ऊंचा घनत्व जलनिकासी 250 वर्ग किलो मीटर के साथ 65 से 95 किलोमीटर है, जो सबसे बड़ा है। यह अपने स्थान से 95–130 $km / 250\ km^2$ से उठता है। वहीं उत्तरी कोयल, दामोदर और बराकर बेसिन 35–65 $km / 250\ km^2$ से उठता है **(सिंह, 1971)।**

विभाजित पठारी क्षेत्र – (आधार भू–गर्भिय विशेषता)

छोटानागपुर पठार में पठारीय विशिष्टता, प्राकृतिक विविधता एवं भू–गर्भिय विशेषताओं के कारण छोटानागपुर पठार को दो भागों में विभक्त किया गया है। उत्तरी छोटानागपुर व दक्षिणी छोटानागपुर। इन दोनों पठारीय भागों के भौगोलिक संरचना में भिन्नता है वस्तुतः दोनों पठारीय भागों में भिन्न–भिन्न प्रकार चट्टानों, पहाड़ियों, मिट्टी व खनिजों की प्राप्ति होती है। इसके अतिरिक्त उच्चावच, सपाट पठार, रिफ्ट वेली में विविध अंतर देखने को मिलते हैं। इसके विपरीत मानसून, वनस्पति मिट्टी, प्राकृतिक संसाधनों में असाधारण रूप से उल्लेखनीय समानता भी देखने को मिलती है। उत्तरी छोटानागपुर में जीवन निर्वाह का आधार कृषि के अतिरिक्त औद्योगिक व उत्खनन से प्राप्त होने वाले कोयला, अभ्रक (Mica) इत्यादि भी उल्लेखनीय हैं। दूसरी ओर छोटानागपुर में भी जीवन निर्वाह का साधन कृषि के अतिरिक्त उद्योग व उत्खनन से प्राप्त बॉक्साइट, मैग्नीज जैसे लौह अयस्क हैं। सिंहभूम में लौह, ताबां व यूरेनियम जैसे खनिज पदार्थों के अवयव प्राप्त होते हैं।

उत्तरी छोटानागपुर –

उत्तरी छोटानागपुर का मुख्य केंद्र हजारीबाग है। इसके अंतर्गत मुख्य रूप से हजारीबाग पठार, इसे उप पठार (कोडरमा, चौपारण व गिरिडीह) चतरा जिला, पलामू जिला, गढ़वा व उत्तरी पूर्व में संथाल परगणा जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं।

दक्षिणी छोटानागपुर –

दक्षिणी छोटानागपुर का मुख्य केंद्र रांची है इसके अंतर्गत सुरगुजा (छत्तीसगढ़) बांकुरा और पुरुलिया (पश्चिम बंगाल) गुमला पाट–पठार, लोहरदग्गा, लातेहार, सिंहभूम, सिमडेगा इत्यादि पठारीय भाग सम्मिलित हैं।

डॉ0 जे. ए. डन के अनुसार " इस पठार का निर्माण क्रमिक रूप से गोंडवाना अवधि के तृत्यक कल्प में हुआ था। (गजेटियर) वस्तुतः हजारीबाग पठार में गोंडवाना चट्टानों का निर्माण हुआ गोंडवाना चट्टानों के कारण हजारीबाग पठार के कई क्षेत्र जैसे कर्णपुरा, मांडू, बड़कागांव इत्यादि क्षेत्रों में कोयले की प्राप्ति होती है। वही हजारीबाग के निम्नतम पठारी भाग कोडरमा एवं इससे जुड़े कई क्षेत्र गिरिडीह में 'अभ्रक' की प्राप्ति होती है। ऊपरी पठारीय हिस्से में दामोदर नदी है, वहीं निचले पठारीय हिस्से में प्रमुख नदी 'बराकर' नदी है। ऊपरी पठारीय हिस्से में ज्यादातर आरकेन–ग्रेनाइट–शिस्ट प्रकार के चट्टानों की अधिकता है।" **(सिंह, 1971)।**

चित्र संख्या–2.4 छोटानागपुर क्षेत्र से सम्बन्धित भौगोलिक राज्य

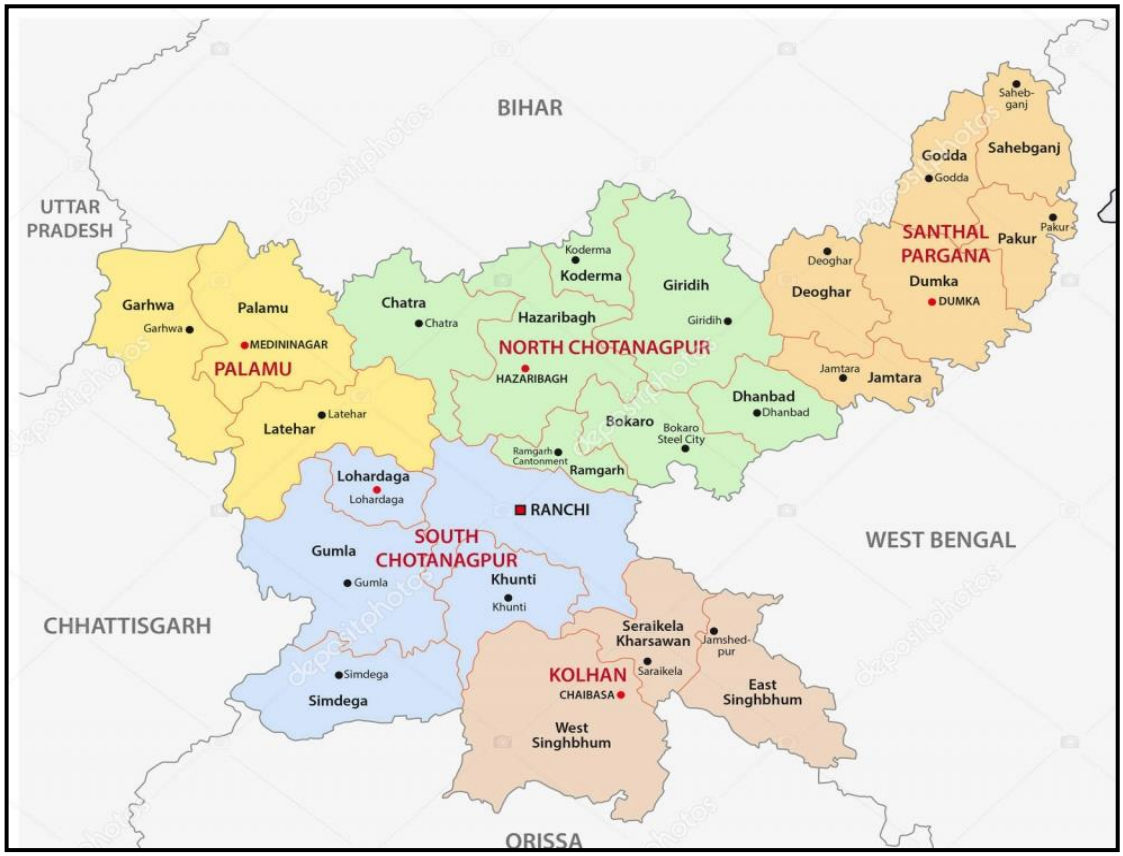

स्रोत–वेब लिंक–4

उत्तरी छोटानागपुर के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र

हजारी बाग पठारः 23°25'– 23°25' (अक्षांश) व 84°29'–86°38' (देशांतर) –

हजारीबाग पठार मुख्य तौर पर हजारीबाग के समूचे जिले चतरा, कोडरमा और गिरिडीह के कुछ क्षेत्रों से घिरा है। ऊपरी पठार की औसत ऊंचाई 600 मीटर तथा निचले पठार की औसत ऊंचाई 300 मीटर है। **(सिंह, 1971)** हजारीबाग उत्तरी छोटानागपुर का मुख्यालय है। इस पठार के उत्तर में गया, पूर्व में संथाल परगना, दक्षिण में रांची तथा पश्चिम में पलामू जिला स्थित है। इसके उत्तर में निम्न पठारीय भाग (कोडरमा–गिरिडीह पठार) स्थित है। इस क्षेत्र का नामकरण एक 'हजारी' नाम छोटे से गांव के आधार पर हुआ, जहां आम के फल उत्पादन किए जाते थे। यह गांव (हजारी) कलकत्ता से बनारस को जोड़ने वाली सड़क के समीप स्थित था। (गजेटियर)

हजारीबाग पठार के अंतर्गत आने वाले लगभग सभी क्षेत्रों में वनों की अधिकता है। चतरा पठार में वन का घनत्व अधिक है। चतरा पठार के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रों सतपहाड़ी तथा टंडवा में बलुआ पत्थर के पहाड़ी है। इन वनों में मुख्यतः साल, महुआ, प्लास, सीसम, केन्द्र तथा गम्भार आदि वृक्ष बहुतायत मात्रा प्राप्त होता है। इस पठार से संबंधित बड़कागाँव (मांरूग बुरू) 3,445 फीट, बमहानबाई, सिलवार, भूसवा, बानादाग, बेलियन तथा कनरी हिल इत्यादि पहाड़ियाँ है। इनकी औसत ऊँचाई 200–250 मीटर तक है। निचले पठारीय हिस्से में गाँवा, तीसरी , डोमचाँच, मसनोडिह, ढाँब इत्यादि 'अभ्रक' प्राप्ति के प्रमुख केन्द्र हैं।

दामोदर घाटी क्षेत्र –

दामोदर घाटी के पहाड़ी क्षेत्रों में प्रायः गोंडवाना प्रकार के चट्टान पाए जाते हैं। पंचेत पहाड़ी (650 मीटर) में बलुआ पत्थर प्राप्त होते हैं। यह मुख्य रूप से 'कोल फील्ड क्षेत्र' है। दामोदर घाटी क्षेत्र से संबंधित मुख्य तौर पर कोल–फील्ड क्षेत्र हैं।

- धनबाद क्षेत्र
- रामगढ़–पतरातु क्षेत्र

धनबाद क्षेत्र अपने खनिज उत्खनन व इससे जुड़े उद्योगों के लिए भारत भर में प्रसिद्ध है। इस क्षेत्र में बिटुमिनस प्रकार के कोयले की प्राप्ति 'झरिया, कतरास' नामक क्षेत्र से होती है। इस क्षेत्र में कोयले की बहुतायता के कारण सड़कों एवं रेलवे पटरियों को उद्योगों तक बिछाया गया है। इस क्षेत्र में कृषि अल्प मात्रा में होती है।

रामगढ़ पतरातु क्षेत्र –

रामगढ़ पतरातू क्षेत्र हजारीबाग पठार का ऊपरी पठारीय भाग है। कर्णपुरा 'कोयले' प्राप्ति के लिए प्रसिद्ध है। पतरातू उद्योगों से जुड़ा क्षेत्र है जिसमें ग्लास व सीमेंट निर्माण उद्योग स्थापित हैं। पतरातू न्युक्लियस उद्योग के रूप में उभरता हुआ क्षेत्र है। **(आर. एल. सिंह, 1971)**

संथाल परगना क्षेत्र –

यह क्षेत्र राजमहल की पहाड़ियों में बसा क्षेत्र है। इस क्षेत्र में प्रायः संथाल जनजातियों की बहुलता है। बंगाल से सटे होने के कारण यहां बंगाल भाषी लोग भी हैं। संथाल परगना का करीब एक–चौथाई भाग जिसमें राज महल, पाकुड़, गोड्डा और दुमका में कुछ हिस्से शामिल हैं, **'दामिन–ए–कोह'** कहा जाता है, जिसका अर्थ है – पहाड़ी अंचल। **(विरोत्तम, 2017)**

पलामू क्षेत्र –

उत्तरी छोटानागपुर पठार यह क्षेत्र हजारीबाग पठार के पश्चिमी भाग में स्थित है। इसके अंतर्गत गढ़वा डालटेनगंज जिले सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र की कोयल प्रमुख नदी है, इसके पूर्व में रांची पठार, दक्षिण में पाट–पठार तथा पश्चिम में सुरगुजा (छत्तीसगढ़) तथा सोनभद्र (उत्तर प्रदेश) के साथ सीमा लगता है।

दक्षिणी छोटानागपुर के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र

पाट–पठार, रांची पठार और दक्षिणी पूर्वी छोटानागपुर क्षेत्र इत्यादि दक्षिणी छोटा नागपुर पठार के भीतर अंतर्निहित है। **(आर. एल. सिंह, 1971)**

पाट–पठार क्षेत्र दक्कन ट्रैप लावा का विस्तृत भाग है जिसका औसत ऊंचाई लगभग 900 मीटर है। इस क्षेत्र में भारी मात्रा में वर्षा के कारण बाँस और साल वृक्ष की अधिकता हैं। इस क्षेत्र में बॉक्साइट खनिज की उपलब्धता है। पाट–पठार के अंतर्गत नेतरहाट की पहाड़ी भी आती है जो लातेहार और गुमला क्षेत्र में बसी है। पाट–पठार, को दो महत्वपूर्ण भाग में विभाजित किया जा सकता है– पहला रांची का पाट–पठार, और दूसरा पलामू पाट–पठार।

रांची 22°2′– 23°43′ (अक्षांश) व 84°0′–85°54′ (देशांतर) –

रांची पठार के उत्तर में पलामू और हजारीबाग, पूर्व में मानभूम तथा दक्षिण में सिंहभूम हैं। प्रारंभ में 'छोटा नागपुर' के रांची के संदर्भ में प्रयोग किया गया था। 'नागपुर' शब्द संभवत 15–16 शताब्दी में **'हैमिल्टन गजेटियर ऑफ हिंदुस्तान'** में मिलता है। 'छोटानागपुर' शब्द का प्रथम उल्लेख रेनल के मानचित्र (1792) में हैमिल्टन गजेटियर से प्राप्त होता है। (बिहार डिस्ट्रिक गजेटियर, रांची, 1970)

कई वर्षों के बाद छोटानागपुर नाम पूरे पठार के संदर्भ में प्रयोग किया जाने लगा। मुगल काल में रांची के लिए **'खोखरा'** नाम का उल्लेख **'आईने–अकबरी'** से

प्राप्त होता है। रांची पठार को दो उपक्षेत्रों में विभक्त किया गया है। पहला उत्तरी रांची पठार तथा दूसरा दक्षिणी रांची पठार।

सुर्वणरेखा तथा दक्षिणी कोयल नदी रांची पठार की दो महत्वपूर्ण नदियां हैं। इस पठार से संबंधित प्रमुख पहाड़ियां (Hills) हैं, ओरिया (3,498 फीट), बरदाग (3,216 फीट), उदनी (3,419 फीट), हुतार (3,209 फीट) इत्यादि।

दक्षिणी पूर्वी छोटानागपुर –

दक्षिणी पूर्वी छोटानागपुर अंतर्गत सिंहभूम, जिला पुरूलिया उच्च मैदान सम्मिलित हैं। दालेमा रेंज तथा बागमुंडी उच्च मैदान (Upland) को छोड़कर इस पठारीय भाग की औसत ऊंचाई 75–150 मीटर है। **(आर. एल. सिंह, 1971)** इस क्षेत्र में औसत वर्षा 100 से 125 मीटर तक होती है। इसके दक्षिणी–पश्चिमी भाग में चाईबासा मैदान है। चावल इस पूरे पठारीय भाग का प्रमुख कृषि फसल है।

दालेमा रेंज सुवर्णरेखा नदी के तिरछे गुजरती है। यह आरकेन अवधि से संबंधित है। **(आर. एल. सिंह, 1971)** पुरूलिया उच्च पठार (Upland) के अतिरिक्त बागमुंडी पठार भी रांची पठारीय का विस्तृत भाग है।

वन संपदा और परिस्थितिकी –

1947 ई0 के पूर्व बिहार का 80 प्रतिशत जंगल छोटानागपुर क्षेत्र के संथाल परगना में था। **(वि. विरोत्तम, 2017)** छोटानागपुर के जनजातियों के लिए वन क्षेत्र न केवल आवास स्थान है अपितु यह (वन क्षेत्र) उनके जीवन निर्वाह का गतिशील माध्यम भी है। अर्थात् छोटा नागपुर में बसने वाले जनजातियों के लिए वन–क्षेत्र का सामाजिक–आर्थिक व सांस्कृतिक महत्व रखता है। सांस्कृतिक महत्व इसलिए क्योंकि उनके प्रकृति के जुड़ाव से संबंधित अनेक पर्व त्योहारों के उदाहरण प्राप्त होते हैं। यथा–सरहुल, करम पूजा और वन–देव इत्यादि की पूजा।

झारखंड राज्य के द्वारा 2013–14 में प्रकाशित आर्थिक सर्वेक्षण के रिपोर्ट के अनुसार "झारखंड के अंतर्गत आने वाले छोटानागपुर क्षेत्र में पूरे देश का 3.32 प्रतिशत वन क्षेत्र प्राप्त होता है, जो भारत के सभी राज्यों में रैंक के हिसाब से 11 वें स्थान पर है। इसी रिपोर्ट में आगे बताया गया है कि "उपग्रह से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार नवम्बर,

2008 से जनवरी 2009 तक 22,977 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में वन हैं, जो पूरे राज्य के 29 प्रतिशत क्षेत्र को समाहित करता है। वस्तुतः छोटानागपुर क्षेत्र में वन परंपरा अत्यंत समृद्ध है। छोटानागपुर पठार के अंतर्गत आने वाले पूरे क्षेत्र में की बात की जाए तो 1,22,100 वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र फैला है, जिसमें झारखंड राज्य के अतिरिक्त बिहार, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों के क्षेत्र सम्मिलित हैं (विकिपीडिया)। इस पठारीय क्षेत्र में मुख्य रूप से दो प्रकार के वनों की प्राप्ति होती है।

1. आर्द पर्णपाती

2. शुष्क पर्णपाती

इस पारिस्थितकी क्षेत्र में शुष्क प्रकार के वन की प्राप्ति अधिक होती है। शुष्क पर्णपाती वन में सबई घास और बांस आर्थिक पैमाने पर प्राप्त होता है। इन वनों में शाल वृक्ष व्यापक पैमाने पर प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त शीशम, महुआ, सागवान, करम और कटहल आदि महत्वपूर्ण वृक्ष हैं। महुआ, केंद, बेर तथा जामुन वृक्षों के फल गरीब लोगों के पेट भरते हैं। यहां की जनजातियां वनों से प्राप्त लकड़ियों का प्रयोग औषधि बनाने व ईंधन के रूप में प्रयोग करते हैं। वनों से प्राप्त होने वाले बांस, सबई घास, मधु, लाह इत्यादि इनके जीवन निर्वाह जीवनयापन का आधार है। **(वि. विरोत्तम, 2017)** वन्यजीवों में हाथी, भालू, चीता, जंगली सूअर, सियार इत्यादि प्रमुख पुश हैं। पलामू में रिजर्व टाइगर है। कोल्हान के घने वनों से हाथी मिलते हैं।

प्रमुख वन्य जीव अभ्यारण –

- भिमबंद वन्यजीव अभ्यारण, बिहार (680 Km^2)
- डालेमा वन्यजीव अभ्यारण, झारखंड (630 Km^2)
- गौतम बुद्ध वन्यजीव अभ्यारण, बिहार (110 Km^2)
- हजारीबाग वन्यजीव अभ्यारण, झारखंड (450 Km^2)
- पलामू टाइगर रिजर्व, झारखंड (1330 Km^2)
- रमाना बागान वन्यजीव अभ्यारण, (150 Km^2)
- संजय नेशनल पार्क मध्य प्रदेश (1020 Km^2)
- तामोर पिंगला वन्य अभ्यारण (600 Km^2)
- सेमारसांत वन्यजीव अभ्यारण (470 Km^2)

- सिमलीपाल नेशनल पार्क, उड़ीसा (420 Km^2)

छोटानागपुर में खनिज संसाधन –

छोटानागपुर पठार खनिज के दृष्टिकोण से अत्यंत समृद्ध क्षेत्र कहलाता है। छोटानागपुर पठार का सर्वाधिक भाग झारखंड के अंतर्गत आता है। झारखंड राज्य भारत के सबसे महत्वपूर्ण राज्यों में से एक है जहां व्यापक पैमाने पर खनिज संसाधनों की उपलब्धता है। वस्तुतः इस कारण से झारखंड को 'रूर' प्रदेश भी कहा जाता है। 'रूर' जर्मनी का सबसे अधिक खनिज संपदा से संपन्न प्रदेश है।

आर. एल. सिंह के अनुसार "छोटानागपुर भारत के सभी राज्यों में से एक महत्वपूर्ण खनिज उत्पादक क्षेत्र है जहां पूरे राष्ट्रीय खनिज उत्पादन का 40 प्रतिशत से लगभग 100 प्रतिशत तक विभिन्न प्रकार के खनिज प्राप्त किए जाते हैं। यहां पूरे भारत का लगभग 100 प्रतिशत तांबा और ऐपेटाइट 95 प्रतिशत, काइनाइट 50 प्रतिशत से भी अधिक कोयला, बॉक्साइड और अभ्रक तथा 40 प्रतिशत से भी अधिक लौह अयस्क का उत्पादन होता है।" "छोटानागपुर पठार से **कोयले** की प्राप्ति गोंडवाना चट्टानों से दामोदर घाटी से प्राप्त होता है। पूर्वी क्षेत्र में कोयले का विस्तार पूर्व–पश्चिम दिशा है और यह पश्चिम के हुटार के खेतों से लेकर पूर्व में क्षरिया के खेतों तक औरंगा एवं दामोदर नदियों के संरेखा के अनुरूप अन्य क्षेत्रों में डाल्टेंनगंज और गिरिडीह भी प्रमुख क्षेत्र है। इनमें से अधिकांश क्षेत्रों में कोक के लिए उपयुक्त अच्छी गुणवत्ता वाले बिट्टूमिनस कोयले होते हैं। अनुमानित तौर पर कुल 48,841 मिलियन टन या देश के कुल भंडार का लगभग 38 प्रतिशत है। कोयले से संबंधित महत्वपूर्ण व प्रमुख क्षेत्र हैं – रानीगंज, झरिया, बोकारो, रामगढ़, कर्णपुरा एवं डाल्टेनगंज इत्यादि हैं। सिंहभूम के खनिज लोहे के संदर्भ में हंटर ने लिखा है कि यह प्रायः पर्वत–श्रेणी में उपलब्ध था। **(वि. विरोत्तम, 2017)**

चूना पत्थर (Limestone) पलामू जिले में पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त हजारीबाग, रांची और सिंहभूम जिले और आसपास स्थित विभिन्न सीमेंट कारखानों से प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त चाइबासा का क्षींकापानी भी महत्वपूर्ण है।

तांबा भी छोटानागपुर पठार से प्राप्त होने वाला महत्वपूर्ण खनिज पदार्थ है। यह सिंहभूम के सोडा ग्रेनाइट आउट क्रोप के 130 किलोमीटर लंबे क्षेत्र में पाया जाता है।

1833 ई0 में डब्लू जॉन्स ने सिंहभूम की तांबा–खानों की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट कराया। **(वि. विरोत्तम, 2017)**

1962 में तांबे का उत्पादन 4,92, 255 टन था। यह **'राखा की खानों'** से उत्खनन कर प्राप्त किया जाता था और **मैन भंडार** में इसे संशोधित किया जाता है। **(आर. एल. सिंह, 1971)**

लौह अयस्क, छोटानागपुर पठार में प्राप्त होने वाले सबसे महत्वपूर्ण संसाधनों में से एक है। छोटानागपुर क्षेत्र में लोगों से हथियार बनाने का कार्य अति प्राचीन काल से ही हो रहा है। यह कार्य मुख्यतः झारखंड में निवास करने वाले **'असुर जनजातियों'** द्वारा किया जाता था। हालांकि असुर जनजाति अब केवल नेतरहाट पठार एवं सीमावर्ती क्षेत्र तक ही सीमित जनसंख्या में बच गए हैं, जो प्राचीन व मध्य काल में प्रसिद्ध लौहकर्मी थे। इनके द्वारा बनाए गए लौह सुदूर मेसोपोटामियां तक पहुंचाया जाता था। **(वि. विरोत्तम, 2017)**

लौह अयस्क खनिज कोल्हान प्रमंडल के सिंहभूम क्षेत्र के धारवाड़ चट्टानी श्रृंखला से जुड़ा है। यहां से प्राप्त होने वाले लौह अयस्क में लगभग 60 प्रतिशत से भी अधिक लौह तत्व की मात्रा होती है। जोंस ने अनुमान लगाया है कि कोल्हान क्षेत्र के सिंहभूम में 60 प्रतिशत से कम लौह सामग्री वाले फसलों से न्यूनतम 1,047 मिलियन टन औसत निकला है। **(आर. एल. सिंह, 1971)**

अभ्रक छोटानागपुर पठार से प्राप्त होने वाले महत्वपूर्ण खनिजों में से एक है। खनिज हजारीबाग पठार को उप–पठारीय भाग (कोडरमा–गिरिडीह पठार) में उत्खनन द्वारा प्राप्त किया जाता है। कोडरमा–गिरिडीह से संबंधित महत्वपूर्ण कोडरमा, डोमचांच, मसनोडीह, ढोढ़ोकोला, नवलसाही, ढाँब, पिहरा, गाँवा, तीसरी इत्यादि क्षेत्रों से प्राप्त किया जाता है। अभ्रक का मुख्य उत्पादक क्षेत्र उत्तरी छोटानागपुर पठारीय भाग से संबंधित हैं। अभ्रक धारवाड़ (आरकेन) से संबंधित सिष्ट, नीश (Gneiss) तथा पेग्मेटाइट प्रकार के चट्टानों से प्राप्त किया जाता है। **(आर. एल. सिंह, 1971)**

बॉक्साइट खनिज छोटानागपुर पठार के पाट–पठार से प्राप्त होता है। इसकी उपलब्धता मुख्य रूप से पश्चिम रांची तथा पलामू जिले में है। इसका खनन लोहरदग्गा

जिले के महत्वपूर्ण खदानों से होता है तथा मूरी क्षेत्र से इसे संशोधित कर एल्युमीना में परिवर्तित किया जाता है। इसके अतिरिक्त छोटानागपुर पठार से अन्य प्रकार के भी खनिज पदार्थ होते हैं जैसे **यूरेनियम** की उपलब्धता सिंहभूम जिले से होती है। परमाणवीय खनिजों की प्राप्ति जादूगोडा के निकट **'राखा के खानों'** से होती है। ऐपेटाइट, क्यानाईट, क्रोमाइट और बॉईराइट जैसे भी अन्य प्रकार के खनिजों की प्राप्ति छोटानागपुर पठार से होती है। **(आर. एल. सिंह, 1971)**

छोटानागपुर क्षेत्र की जनसंख्या –

छोटानागपुर क्षेत्र का सर्वाधिक भाग झारखंड राज्य को समाहित करता है या दूसरे शब्दों में देखें तो झारखंड राज्य के लगभग सभी जिले छोटानागपुर पठार से संबंधित हैं। 2013–2014 में हुए झारखंड के आर्थिक सर्वेक्षण में राज्य द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार यहां की कुल जनसंख्या पूरे देश के कुल भ–ूभाग का 2.4 प्रतिशत भू–भाग पर इस राज्य की जनसंख्या निवास करती है। पूरे राज्य में 26.2 प्रतिशत जनसंख्या में विभिन्न जनजातियां निवास करती हैं। भारत के सभी राज्यों में से झारखंड **'अनुसूचित जनजाति'** के मामले में छठे स्थान पर है। यहां पर सभी प्रकार के जनजाति लोगों में सर्वाधिक जनसंख्या ऊराँव (19.66 प्रतिशत) है। इसके पश्चात् मुंडा (14.56 प्रतिशत), हो (10.63 प्रतिशत) कुल जनजाति जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती है। खाखाड़, लोहरा, भूमिज व खड़िया आदि जनजातियां कुल जनजातीय जनसंख्या का 2 से 3 प्रतिशत का योगदान देती हैं। वहीं शेष जनजातियां कुल जनजाति जनसंख्या का केवल 2.4 प्रतिशत के जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन सभी जनजातीय जनसंख्या में कुछ 8 प्रकार के जनजातियों की जनसंख्या 90 प्रतिशत के इर्द–गिर्द है। छोटानागपुर क्षेत्र की कुल जनसंख्या 33,547,964 (1981) निवास करती है, छोटानागपुर में औसत घनत्व 167 वर्ग किलोमीटर है। छोटानागपुर क्षेत्र में कुल 32 प्रकार की जनजातियां जनसंख्या निवास करती हैं। जिसमें से कुल जनजातीय जनसंख्या का 9.8 प्रतिशत जनसंख्या शहरी जीवन की ओर आकर्षित है जो शेष जनसंख्या 9.8 प्रतिशत जनसंख्या शहरी जीवन की ओर आर्कषित हैं (2013–14) शेष जनसंख्या (90 प्रतिशत से भी अधिक) आज भी ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। ज्यादातर जनजाति जनसंख्या रांची, मयूरभंज, सुंदरगढ़ और सुरगुजा

इत्यादि जिले में निवास करती है। सिंहभूम, केंनझोर, संबलपुर और रामगढ़ में जनजातियों की जनसंख्या मध्यम है, जबकि हजारीबाग, गिरिडीह, धनबाद, पलामू, पूरूलिया, बांकुरा तथा बिलासपुर आदि क्षेत्रों में अल्प प्रतिशत में जनजातीय जनसंख्या निवास करती हैं।

छोटानागपुर की कुल जनसंख्या का जनजातीय जनसंख्या का प्रतिशत

क्र. सं.	जिला	जनजातिय जनसंख्या का प्रतिशत
1.	रांची	56.41
2.	हजारीबाग	9.06
3.	धनबाद	9.10
4.	सिंहभूम	44.08
5.	गिरिडीह	12.90
6.	पलामू	18.32
7.	मयूरगंज	57.67
8.	केउनझार	44.81
9.	सुंदरगढ़	51.26
10.	संबलपुर	27.20
11.	पुरूलिया	18.79
12.	बांकुरा	10.55
13.	सुरगुजा	54.83
14.	रामगढ़	48.51
15.	बिलासपुर	23.39
16.	रायपुर	18.55

स्रोत– भारत का जनगणना, 1987 सीरीज–1, भाग–2

उप स्रोत – (Salam, 1996)

संभवतः सांस्कृतिक अतिक्रमण 1500 ई0 पू0 के लगभग और दूसरा इससे पहले भी हुआ होगा। इस युग में 'ऑस्ट्रेलॉयड्' अर्थात मुख्य रूप से मुंडा–भाषी जनजातियां छोटानागपुर (झारखंड) आयी होगी। आर्यों के आगमन के द्रविड़, उराँव आदि जनजातियां उत्तर पश्चिमी क्षेत्रों से स्थानांतरित होकर छोटानागपुर झारखंड आदि क्षेत्रों में पहुंची और यहां के प्रोटो–ऑस्ट्रेलॉयड् जनसंख्या को काफी हद तक प्रभावित किया। यहां के मुंडा–भाषी एवं द्रविड़–उराँव आदि में इतनी समानता है कि इन्हें अलग–अलग करके देखना वर्तमान संदर्भ में मुश्किल है। खरिया, बिरहोर तथा असुर झारखंड की प्राचीनतम जनजातियां हैं। मुंडा–उराँव, हो जनजातियां बाद की और कोरवा प्राचीनतम एवं बाद की है। चेरो, खरवार, भूमिज तथा संथाल आदि परवर्ती काल की हैं। **(वि. विरोत्तम, 2017)**

खरिया प्राचीनतम जनजातियों में एक है जो वर्तमान में सिंहभूम तथा मानभूम में बहुत कम संख्या में बचे रहे हैं। संभवतः बिरहोर भी कैमूर की पहाड़ियों से होते हुए ही छोटानागपुर में प्रविष्ट हुए थे। वे बिरजिया तथा असुरों की तरह ही छोटानागपुर में प्रविष्ट होने वाली प्रारंभिक जनजातियों में एक थे। मुंडाओं के छोटानागपुर में प्रवेश काल अनिश्चित है। बी. सी. मजूमदार के अनुसार 'इन्होंने पूर्ववर्ती जनजातियों को पूर्व–दक्षिण की ओर धकेलकर छोटानागपुर खास पर कब्जा कर लिया।" **(वि. विरोत्तम, 2017)** द्रविड़–ऊराँव, मुंडाओं के बाद, छोटानागपुर की कई प्रमुख जनजातियां हैं। उनका संबंध दक्षिण भारत तथा पूरब के द्वीपों की जातियों से है। दक्षिण भारत से चलकर उत्तर–पश्चिम होते हुए ये रोहतास क्षेत्र में पहुंचे थे। वहां वे चेरों, खरवारों द्वारा भगाए जाने पर छोटानागपुर में प्रविष्ट हुए और मुख्यतः छोटानागपुर खास तथा पलामू क्षेत्र में बस गए । **(वि. विरोत्तम, 2017)**

भूमिज जनजातियां मानभूम क्षेत्र में हो तथा भुइयाँ क्रमशः सिंहभूम तथा पलामू क्षेत्र तक सिमटे रहे। "एक हजार ई0 पू0 तक चेरों–खरवारों तथा संथालो को छोड़कर यहां उपलब्ध प्रायः सभी जनजातियां छोटानागपुर क्षेत्र में बस चुकी थीं। छोटानागपुर खास में मुंडाओं–उराँवो, सिंहभूम तथा हजारीबाग में हो, मानभूम में भूमिज, पलामू में ऊराँव तथा बिरजिया जनजातियों की प्रधानता थी। पूर्व मध्यकाल में संथाल हजारीबाग क्षेत्र में तथा चैर–खरवार पलामू क्षेत्र में आकर बसे, संथाल परगना में संथाल ब्रिटिश काल में आकर बसे। **(वि. विरोत्तम, 2017)**

इसके अतिरिक्त छोटानागपुर क्षेत्र में बंजारा जनजाति (हजारीबाग तथा सिंहभूम) क्षेत्र में निवास करते हैं। इनकी जनसंख्या अत्यंत अल्प मात्रा (412) में हैं। बिन्झीया जनजाति, मध्य प्रदेश और ओड़िसा के पठारीय क्षेत्र में बसे हैं। चेरों का संबंध पलामू रांची हजारीबाग से है। चेरों जनजातियों के उपजातियां भी होती हैं। जिनमें (मोवार, कुमार सोहनैत और महतो) इत्यादि हैं। हो जनजाति मुख्य रूप से मयूरगंज, केउनझार, सुंदरगढ़, बांकुरा, रांची या हजारीबाग इत्यादि क्षेत्र में बसे रहे। खारवाड़, माँझी, खोंड, किसान, कोरवा, लोहरा, माल–पहाड़िया, सौर्य पहाड़िया इत्यादि जनजातियां भी छोटा नागपुर पठारीय भाग में बसे हैं।

अध्याय–तृतीय

छोटानागपुर क्षेत्र की महापाषाणिक संस्कृति

अध्याय–तृतीय

छोटानागपुर क्षेत्र की महापाषाणिक संस्कृति

छोटानागपुर पठार के महापाषाणिक परंपरा का अत्यन्त समृद्ध विकासक्रम प्राचीन समय से ही रहा है। यद्यपि प्राचीन समय में यहॉ के निवासियों द्वारा किस प्रकार से महापाषाण परंपरा का अनुपालन कर रहे थे? वे कौन लोग थे? वे कहॉ के मूल निवासी थे? इस संदर्भ में न तो दस्तावेजों से कोई प्रमाण मिलते है और न ही यहॉ महापाषाणिक कब्रों के व्यवस्थित व वैज्ञानिक उत्खनन के अभाव से भौतिक संस्कृति पर अत्यंत विस्तृत प्रकाश डाला जा सकता है। तथापि इस प्राचीन परंपरा का आज भी यहॉ (छोटानागपुर क्षेत्र) के जनजातियों में प्रचलन को जीवंत परंपरा के रूप में देखा जा सकता है।

दक्षिण भारत, विदर्भ, विंध्य व उत्तर–पूर्वीराज्य पर ज्यादातर पुरातत्वविद्ों ने व्यापक प्रकाश डाला है, किन्तु छोटानागपुर क्षेत्र का महापाषाणिक परंपरा के संदर्भ में विस्तृत विवरण नहीं मिलता। यद्यपि यत्र–तत्र अत्यन्त सीमित रूप में अनेक पुरातत्वविदों व विद्वानों ने इस बात का अवश्य उल्लेख किया है कि छोटानागपुर पठारी क्षेत्रों में भी महापाषाणिक परंपरा का जीवंत प्रयोग स्थानीय निवासियों द्वारा किया जा रहा था। इस संदर्भ में वी0डी0 कृष्णा स्वामी (1947) लिखते है कि ''अत्यन्त पृथक महापाषाणिक परंपरा, उत्तर–पूर्वी भारत के आसाम तथा छोटानागपुर में पायी जाती है, जहॉ के लोक आस्ट्रोएशियाटिक भाषा का प्रयोग करते है।'' उन्होंने ने यह भी बताया कि छोटानागपुर आसाम और बस्तर में जीवंत महापाषाणिक परंपरा का सातत्व आज तक बना है, तथा छोटानागपुर के उरॉवों द्वारा केयर्न–शवाधान का प्रयोग किया जाता है।

एन0 आर0 बनर्जी महोदय ने भी 'अमृतामंगलम' नामक लेख में उल्लेख करते है कि ''यहॉ तक कि दक्षिण भारत के बाहर भी अस्थि–कलश का प्रयोग छोटानागपुर पठार के रॉची जिले में मुंडा जनजाति द्वारा किया जाता है।'' आगे लिखते हुए एन0 आर0 बनर्जी (1965) बताते है कि ''हाल के अध्ययन कार्य यह

दिखाते है कि सिंहभूम जिले में अस्थि–कलश के साथ डोलमेनॉड–सिस्ट का प्रयोग किया जाता है''।

अन्य विद्वानों ने भी छोटानागपुर के महापाषाणिक संस्कृति का यत्र–तत्र उल्लेख किया है। केनेथ केनेडी के अनुसार ''घोष (1969) महोदय ने रॉची व सिंहभूम जिले के क्षेत्र में लगातार महापाषाणिक परंपरा को संपादित किये जाने का उल्लेख किया। यहॉ प्रागैतिहासिक बनावट के प्रमाण मिलते हैं। इनका अध्ययन 'हो' जनजाति के शवाधान परंपरा से संबंधित है''।

छोटानागपुर क्षेत्र में महापाषाण परंपरा कहॉ से आयी, इस पर वी0डी0 कृष्णास्वामी (1948) ने लिखा कि ''वाल्टर रूबेन के अनुसार प्राचीन मुंडाओं की महापाषाणिक संस्कृति का संबंध पाश्चात्य से है, जो पूर्व लौह युग में फिलिस्तन और पर्सिया होते हुए उत्तर भारत पहुॅची। इसकी एक शाखा दक्षिण की तरफ पहुॅची वही दूसरी शाखा पूर्व की तरफ अर्थात् छोटानागपुर तक पहुॅची''।

छोटानागपुर की महापाषाण संस्कृति पर दक्षिण भारत के महापाषाणिक संस्कृति का कोई प्रभाव था, या छोटानागपुर की महापाषाणिक संस्कृति मूल रूप से स्वतंत्र रूप में स्थापित हुई थी, इस पर निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता।

कुछ विद्वान छोटानागपुर से 'मुंडा' व 'हो' जैसे आस्ट्रो–एशियाटिक भाषा से संबंधित होने के कारण छोटानागपुर के महापाषाणिक संस्कृति को उत्तरी–पूर्वी राज्य के महापाषाणिक संस्कृति से साम्यता बतायी जाती है, उत्तर–पूर्वी राज्य के खासी व अन्य जनजाति का भी संबंध आस्ट्रो–एशियाटिक भाषा परिवार से हैं।

किन्तु वास्तव में उत्तरी–पूर्वी राज्य व छोटानागपुर की कुछ महापाषाणिक संस्कृत के प्रकृति एक जैसी दिखती हो, लेकिन इन दोनों के महापाषाणिक संस्कृति का आपस में कोई संबंध ऐसा कहना अतिश्योक्ति होगी। परंतु इस संभावना से इंकार नही किया जा सकता कि दोनों क्षेत्र भौगोलिक रूप से मनुष्यों के आवागमन के लिए अवमुक्त थे। मध्यपाषाणिक संस्कृतियों के संदर्भ में एक हालिया अध्ययन में इनके एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में अबाध्य संचरण को दिखाता है। इस संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता कि गंगा और ब्रह्मपुत्र के द्वारा अलग किये गये इन दोनों क्षेत्रों में संपर्क के कुछ मार्ग अवश्य रहे होगे और संभवतः सांस्कृतिक तत्वों

का विसरण इन्हीं के माध्यम से हुआ होगा। इस विषय पर गहन अनुसंधान की आवश्यकता है।

यहॉ तक की छोटानागपुर के महापाषाणिक संस्कृति का संबंध जीवंत परंपरा से हैं, मुंडा, हो, उरॉव और असुर इत्यादि जनजाति प्रायः मृत्यु संस्कार के लिए द्वितीयक शवाधान पद्धति का प्रयोग करती हैं। द्वितीयक शवाधान पद्धति में, शव को जलाने के पश्चात् शरीर के भिन्न–भिन्न के शेष जले हड्डियॉ को एकत्रित कर, एक निश्चित समय के बाद अवशेष अस्थियों को कलश में डालकर दफनाते हैं, इसे पश्चात् स्मृति स्वरूप उस पर बड़े प्रकार का पत्थर रख दिया जाता हैं। सर्वप्रथम ई0टी0 डाल्टन (1878) ने तत्कालीन बिहार (झारखण्ड) के रॉची जिले से संबंधित चोकाहातु से 7000 से भी अधिक महापाषाणिक पत्थरों के होने की जानकारी दी, जहॉ तब भी स्थानीय जनजाति द्वारा महापाषाणिक परंपरा का प्रयोग किया जा रहा था।

इसके पश्चात् एस0सी0 रॉय (1912) ने अपने पुस्तक 'द मुंडाज एवं देयर कंट्री' में मुंडाओं के महापाषाणिक जीवंत परंपरा का वर्णन किया। एम0 टोप्पनो ने रॉची पठार में मुंडाओं द्वारा संपादित किये जाने वाले शवाधानिक अनुष्ठान परंपरा का उल्लेख किया। पुनः सन् 1965 में एस0सी0 रॉय के निर्देशन जिले के खूँटी टोली नामक स्थान पर स्थापित महापाषाणिक सन् 1969 में ए0 घोष के निर्देशन में पुनः खूटीटोली का भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा उल्लेख किया। इसके पश्चात् भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा झारखण्ड के प्राचीन महापाषाणिक स्थलों जैसे तमाड़ जिले के तथा पंकरी बरवाडीह इत्यादि स्थलों का उल्लेख किया।

छोटानागपुर के मुंडा, हो व उरॉव जनजाति के अतिरिक्त वी0 इल्विन महोदय ने उड़ीसा के 'बोंडो' जनजाति द्वारा, हस्डन व विनोदिनी देवी ने 'नागा जनजाति' द्वारा तथा दास (1957), कॉप (1985) महोदय ने दक्षिण भारत के कुरबस जनजाति द्वारा जीवंत महापाषाणिक संस्कृति के प्रमाण प्रस्तुत किया हैं। (राधा देवी, 2018)

छोटानागपुर के जनजातियों की प्रचलित 'जीवंत परंपरा' का सर्वोत्तम उदाहरण **'महापाषाणिक संस्कृति'** है। प्राचीन भारत के लौहयुगीन संस्कृति से जुड़ा यह पहलू

वास्तव में आश्चर्यचकित करता है, कि आज भी छोटा नागपुर की विभिन्न जनजातियों ने इस प्रथा को अपने संस्कृति से जोड़े रखा है। भारत में ऐसे अन्य उदाहरण उत्तर पूर्वी राज्य **'मणिपुर'** से प्राप्त होता है। वहां के जनजातियों के बीच 'महापाषाणिक संस्कृति' संस्कृति आज भी पुष्पित पल्लवित हो रही है।

वर्तमान में छोटा नागपुर के झारखंड प्रदेश जनजातियों द्वारा 'महापाषाणिक संस्कृति' को **'हड़गड़ी'** या **हरसली, पत्थलगढ़ी** इत्यादि नाम से चिन्हित किया जाता है।

शोध कार्य का उद्देश्य छोटा नागपुर के झारखंड प्रदेश के जनजातियों के 'महापाषाणिक संस्कृति' का अध्ययन कर उनके सामाजिक सांस्कृतिक जीवन का वैज्ञानिक पूर्वक अवलोकन व विश्लेषण करना है। जैसा की सर्वविदित है कि "जनजातियों के प्राचीन जीवन संबंधित हमें कोई भी लिखित साक्ष्य प्राप्त नहीं होता" अतः हमारे पास एकमात्र पुरातात्विक स्रोत ही शायद बेहतर विकल्प है जिनसे उनके प्राचीन जीवन पद्धति और सामाजिक सांस्कृतिक जीवन के विभिन्न आयामों का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जा सके। महापाषाणिक अनुष्ठान का संबंध केवल शवाधान या स्मृति चिन्ह से ही नहीं अपितु इसका संबंध आस्था, धर्म, उत्सव वैचारिक विश्वास संबंधी अवधारणा से भी है जिनमें पूर्व जन्म, स्वर्ग–नरक, गोत्र पद्धति इत्यादि संज्ञानात्मक विषय आते हैं।

छोटा नागपुर के झारखंड प्रदेश में महापाषाण संस्कृति से संबंधित स्थल मुख्य रूप से जनजाति बहुल इलाकों में सर्वाधिक हैं। जिनमें रांची, खूंटी, चाईबासा, जामताड़, सिंहभूम क्षेत्र, लोहरदग्गा, रामगढ़, हजारीबाग, चतरा तथा कोडरमा इत्यादि जैसे महत्वपूर्ण जिले आते हैं।

पूर्व में मेरे द्वारा हजारीबाग जिले से संबंधित महापाषाणिक स्थल का अवलोकन किया गया था। जिनमें मुख्य रुप से चार स्थलों का दौरा किया था।

1.1 पंकरी बरवाडीह (23.868, 85.237)

पंकरी बरवाडीह नामक महापाषाणिक स्थल बड़कागांव (प्रखण्ड) व जिला हजारीबाग में स्थित है। हजारीबाग से बड़कागांव जाने के क्रम में बड़कागांव बाजार से 1 किलोमीटर पहले ही पंकरी बरवाडीह नामक स्थान है जहां यह महापाषाण स्थित है।

संबंधित अवलोकन

पूर्व में इस महापाषाणिक स्थल से संबंधित साक्ष्य को स्वतंत्र शोधकर्ता एस सुभाषीश महोदय द्वारास्थापित महापाषाण का खगोलीय विद्या से संबंध को उजागर किया है। इस महापाषाण स्थल की आश्चर्यजनक विशेषता है कि जब 21मार्च और 23 सितंबर को दिन और रात समान होते हैं तब दो स्थापित महापाषाण के मध्य सूर्य का दिखना एक अद्‌भुत दृश्य है।

मेरे द्वारा अवलोकन शोध का यह प्राचीन महापाषाणिक स्थल है। यह महापाषाण किस समुदाय समूह द्वारा स्थापित किया गया था यह कहना अत्यंत कठिन है। क्योंकि स्थापित महापाषाण से संबंधित समुदाय समूह आज उस क्षेत्र में नहीं है। वह कब यहां से विस्थापित हुए यह भी अज्ञात है। भौतिक साक्ष्य के तौर पर यहां मेनिहर प्रकार के महापाषाण हैं। साथ ही कुछ स्लैब भी बिछे हुए हैं, जिन पर कपमार्क्स का चिन्ह अंकित है।

1.2 बाना दाग– (23.982, 85.304)

हजारीबाग जिले के अंतर्गत आने वाले इस क्षेत्र का महापाषाण भी एस सुभाषीश द्वारा उद्धघाटित किया जा चुका है।

संबंधित अवलोकन

मेनिहर प्रकार के समूहों में 15 से अधिक की संख्या में प्राचीन प्रकार की मेगालिथ महापाषाण है यह अज्ञात समुदाय समूह द्वारा स्थापित किया गया था जो वर्तमान में इस स्थल से विस्थापित हो चुके हैं। स्थानीय जानकारी के अनुसार यह

जनजाति समुदाय से जुड़ा हुआ अनुष्ठान है, यह निश्चित है। पत्थरों के पुराने होने के कारण उनमें धब्बे पड़ गए हैं।

1.3 लोहसिंघना–(24.005, 85.348)

यह एकाश्म पत्थर संबंधी महापाषाणिक स्थल है जो हजारीबाग जिले में स्थित कल्लू चौक के समीप सड़क के किनारे स्थापित है।

संबंधित अवलोकन

यह एक प्राचीन प्रकार का एकाश्म पत्थर मेनिहिर है। यह अज्ञात समूह द्वारा स्थापित किया गया था। एकाश्म पत्थर को गाड़े जाने के पीछे स्थानीय लोगों में भिन्न–भिन्न धारणा है। यह शवाधान से संबंधित है या सीमांकन के प्रतीक के रूप में स्थापित किया गया था या किसी स्मृति प्रतीक के रूप में स्थापित किया गया था, यह स्पष्ट नहीं।

स्थानीय हिंदू धर्म से संबंधित विभिन्न जातियों द्वारा इस पत्थर की धार्मिक पूजा की जाती है।

1.4 जबरा–(23.999ए 85.389)

यह स्थान हजारीबाग जिले के मुख्य शहर से 2 किलोमीटर आगे पूर्व की दिशा में कोर्रा क्षेत्र में स्थित है।

संबंधित अवलोकन

यहां दो छोटे प्रकार के मेनिहर प्राप्त होते हैं। इन पत्थरों का स्थानीय लोगों के द्वारा पूजा किया जाता है, अर्थात धार्मिक महत्व है। यह किसी जनजाति से संबंधित महापाषाण है या नहीं, यह स्पष्ट नहीं है।

2. रामगढ़ जिले से संबंधित महापाषाणिक स्थल

मेरे द्वारा रामगढ़ जिले से संबंधित केवल दो ही स्थलों का विधिवत सर्वेक्षण किया गया है। पूर्व में इन स्थलों का विभिन्न शोध कर्ताओं द्वारा विभिन्न दृष्टिकोण के माध्यम से उद्घाटित किया गया है । प्रमुख स्थल इस प्रकार हैं –

2.1 नापो– (23.701, 85.413)

नापो वर्तमान में हजारीबाग जिले व रामगढ़ जिले की सीमा के नजदीक है।

संबंधित अवलोकन

इस स्थल का पूर्व में स्वतंत्र शोधकर्ता एस. सुभाषीशमहोदय द्वारा महापाषाण काल के खगोलीय विद्या से संबंध की चर्चा की है।

मेरे द्वारा इस स्थल के सर्वेक्षण में अज्ञात समुदाय समूह द्वारा महापाषाण स्थापित किया गया था, जो वर्तमान में विस्थापित हो चुके हैं । स्थानीय लोगों को इस संदर्भ में कुछ भी स्पष्ट जानकारी नहीं है। यह स्पष्ट तौर पर शवाधान से संबंधित हैं । प्राप्त स्थानीय जानकारी के अनुसार से पूर्व में वर्षा के दिनों में शवाधान से संबंधित कलश या घड़े व लौह औजारों के ऊपर आने की बात स्वीकारी गयी है।

मेनिहिर व बिछाए गए स्लैब में कप मार्क्स के स्पष्ट भौतिक प्रमाण मिलते हैं। पत्थर अत्यंत चमकीले हैं।

संभवत यह पत्थर पास के पहाड़ी से लाए गए ग्रेनाइट चट्टान के टुकड़े हो। मेनिहिर को झुका कर खड़ा किया गया है।

2.2 हुहुआ– (23.609, 85.549)

रामगढ़ जिले में स्थित हुहुआ एक अत्यंत महत्वपूर्ण महापाषाण स्थल है इस स्थल से प्राप्त महापाषाण स्थापत्य कला से प्रेरित है।

संबंधित अवलोकन

महापाषाण के पत्थर बिल्कुल भी ज्यामितीय रूप से सुव्यवस्थित है।एक एकाश्म पत्थर जो पिरामिड नुमा है। उसके ऊपर आमलक भी है। आमलक का होना स्थापत्य से संबंधित है। इनका प्रयोग क्यों किया गया इस संदर्भ में स्पष्ट रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता।

अन्य छः ऐसे एकाश्म पत्थर हैं किंतु जिनके ऊपर आमलक नहीं है। एकाश्म पत्थर के ऊपर बीच में गोलाकार गड्ढा बना है। जो 3.25" गहरा है इन सब के ऊपर से आमलक अनुपस्थित है

इसके अतिरिक्त 9 वर्गाकार स्लैब 27"×27"भी प्राप्त होते हैं एक पत्थर में रॉक आर्ट अर्थात उस वर्गाकार पत्थर के चारों ओर एक ज्यामितिय कलाकृति बनी है।

प्राप्त एकाश्म पत्थर में कुछ पत्थरों के नीचे एक विशेष प्रकार के छिद्र प्राप्त होते हैं। इसके पीछे का उद्देश्य स्पष्ट नहीं है। संभवतः यह छिद्र इन पाषाण खंडों के परिवहन के लिए बने हो सकते है।

इस महापाषाण स्थल से घड़े अथवा कलश एवं उसमें रखे गए अस्थियों के अवशेष अब ऊपर आ रहे हैं। सामान्य सभी प्रकार के घड़ो का उपरी भाग टूटा है।

वर्तमान में इस महापाषाणिक स्थल के समीप रहने वाले मुंडा जनजाति द्वारा देख–रेख किया जा रहा है अतः यह कहना समीचीन प्रतीत होता है कि ये मुंडा जनजाति से संबंधित है।

3. राँची जिले से संबंधित महापाषाणिक स्थल –

राँची जिले से संबंधित पंच परगना यथा राँची, बुंडू, तमाड़, सोनाहातू और सिली जैसे क्षेत्रों में महापाषाणिक स्थलों की बहुतायत है। डाल्टन महोदय से लेकर एस. पी. रॉय जैसे महत्वपूर्ण विद्वानों द्वारा राँची जिले के विभिन्न महापाषाणिक स्थलों का अध्ययन किया जा चुका है। '**आर्केलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया**' द्वारा भी

इन क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया जा चुका है। जिसकी रिपोर्ट इण्डियन आर्कायोलॉजी ए रिव्यू के विभिन्न संस्करणों में उपलब्ध हैं।

संबंधित महत्वपूर्ण महापाषाणिक स्थल, मुंडा जनजातियों की इस क्षेत्र में अन्य जनजातियों की अपेक्षाकृत अत्यधिक वर्चस्वता को दर्शाता है। ज्यादातर महापाषाणिक स्थल मुंडा जनजाति से संबंधित है।

प्रमुख क्षेत्रों का उल्लेख इस प्रकार है–

नगड़ी–

यह महापाषाणिक क्षेत्र में राँची जिले में कांके से आगे मुख्य सड़क के समीप स्थित है।

संबंधित अवलोकन–

3.1 नगड़ी 1 – (23·469984, 85.317153)

यह अत्यंत सुंदर महापाषाणिक स्थल नगड़ी 1 मुख्यतः उराँव जनजाति से जुड़ा है। यही 100 से अधिक की संख्या में महापाषाण समाधियॉ प्राप्त होता है। 18 वर्ष की उम्र से नीचे व आकस्मिक मृत्यु से संबंधित महापाषाणिक अनुष्ठान को पृथक रूप से संपादित किए जाने की परंपरा का साक्ष्य।

यह स्थल दो छोटे टीले या जुड़वा टीले (मुख्य भूमि से 5 फीट ऊपर उठा हुआ भू स्थल) जिसके चारों और अव्यवस्थित तरीके से स्लैब बिछाकर महापाषाणिक अनुष्ठान संपादित किए गए हैं। यहां प्राचीन व नवीन दोनों प्रकार के मेगालिथ का प्रमाण प्राप्त होता है।

नगड़ी 11–(23.468, 85.313)

नगड़ी–1 से 200 मीटर पश्चिम दिशा में मुंडा जनजाति से संबंधित महापाषाणिक स्थल है। एक ही गांव में पृथक–पृथक रूप से उराँव व मुंडा जनजाति द्वारा मेगालिथ अनुष्ठान संपादित किए जाने का अद्‌भुत प्रमाण

मेनिहिर व बिछाये गए स्लैब के 15 की संख्या में महापाषाण के प्रमाण।

3.2 तमाड़–I: (23.069988**,** 85.683486)

राँची जिले के अंतर्गत तमाड़ में कई महापाषाणिक स्थल हैं। तमाड़–1 बुरूडीह या अमलेशा जाने वाले रोड में बुरूडीह से ठीक 1 किलोमीटर पहले सड़क के बाएं तरफ स्थित है।

संबंधित अवलोकन

एकाश्म पत्थर (मेनहिर) जहां इसे स्थापित किया गया है, वहाँ मिट्टी का ढ़लान है और एकाश्म पत्थर झुकाकर गड़ा गया है। तकरीबन 45°–60° के कोण के बीच झुका है। यह शवाधान के लिए प्रयोग किया गया है।

इसके 50 मीटर दूर 150 की संख्या में डोलमेन प्रकार के स्लैबबिछाये गये हैं। यह मुंडा जनजाति से संबंधित है। पत्थर नजदीकी पहाड़ी से प्राप्त किया गया है।बिछे स्लैब पर कप मार्क्स प्रायः पत्थरों पर देखने को मिलते हैं।

इसके अतिरिक्त सड़क के दूसरे छोर दायीं तरफ तीन सुव्यवस्थित डोलमेन के साक्ष्य मिलते हैं। इस डोलमैन के स्थापित करने का उद्देश्य शवाधान से संबंधित नहीं है।

3.3 तमाड़–II:(बुरुडीह) (23.061, 85.665)

यह महापाषाणिक स्थल तमाड़–1 से 1 किलोमीटर आगे अमलेशाबुरुडीह में स्थित है।

संबंधित अवलोकन

तकरीबन 3000 से अधिक महापाषाण डोलमेन, मेनिहिर व शिष्ट प्रकार के वृहत्तम आकार, जो 8 फीट तक लंबे पत्थर हैं, का प्रयोग हुआ है। नवीन मेगालिथप्रकार में लिखित प्रमाण उपलब्ध हैं, जिसमें मृत व्यक्ति एवं संबंधित तारीख व ग्राम का उल्लेख है। कप आकृति सामान्य तौर पर देखने को मिलती है।

3.4 तमाड़–III – (23.073198 ,85.690689)

यह महापाषाणिक स्थलतमाड़–11 से 1 किलोमीटर आगे बॉरू राजस्व ग्राम में पड़ने वाले बेसनाडीह नामक ग्राम में स्थित है।

संबंधित अवलोकन

यहॉ 2500 से अधिक महापाषाण का स्थापन तथा ग्रेनाइट पत्थर की उपलब्धता प्रचुर मात्रा में है। मुख्य तौर पर बिछाए गए स्लैब (डोलमेन) प्रकार के मेगालिथ के प्रमाण मिलते हैं। बिछाये गये स्लैब को वृताकार तरीके से बिछाये जाने के स्पष्ट प्रमाण मिलते है।

3.5 चोका हातू : (23.165582, 85.798820)

छोटानागपुर क्षेत्र से संबंधित सबसे वृहत्तम् महापाषाणिकस्थलों मेसे एक है। यह सोनाहातू प्रखंड में स्थित मुंडा जनजाति का सर्वाधिक बड़ा महापाषाणिक स्थल है। यहां 7500से अधिक संख्या में मेगालिथ के प्रमाण मिलते हैं।

संबंधित अवलोकन

राँची गजेटियर से प्राप्त साक्ष्यों के अनुसार डाल्टन महोदय द्वारा इस स्थल को चिन्हित किया गया था। वर्तमान में यहाँ प्राचीन व नवीनतम प्रकार के महापाषाण के प्रमाण प्राप्त होते है। डोलमेन प्रकार, शिष्ट प्रकार, मेनिहिर प्रकार व सर्वाधिक संख्या में गोलाकार बिछाये गये स्लैब प्रकार के मेगालिथ उपलब्ध हैं। **कप आकृति** कई पत्थरों में अंकित किये गये है। संबंधित पाहन (मुख्य सरदार) से बातचीत से प्राप्त जानकारी के अनुसार यह स्थल में उन व्यक्तियों का हड़गड़ी किया जाता है जिनके पूर्वज इस स्थान से संबंधित थे किंतु जीविकोपार्जन की तलाश में आज वे अन्य दूसरे स्थानों पर बसे हैं लेकिन वह हड़गड़ी (मेगालिथ) स्थापित करने इसी स्थल पर आते हैं। 10 फीट लंबे डोलमेन समाधि के साथ गोत्र संबंधी अवधारणा से जुड़ी परंपरा का उल्लेख भी यहॉ से प्राप्त होता है।

3.6 दूलमी : (23.183461, 85.841710)

सोनाहातू प्रखंड के अंतर्गत आने वाला यह महापाषाणिक स्थल है जहॉ 1000 से अधिक महापाषाणिक पत्थर शवाधान से संबंधित है।

संबंधित अवलोकन

संबंधित क्षेत्र का हिमांशु शेखर व अन्य शोधकर्ता द्वारा इस महापाषाणिक स्थल का अध्ययन किया जा चुका है। यहाँ पर प्राचीन और नवीन दोनों प्रकार के हड़गड़ी (मेगालिथ)स्थापित हैंमुख्य तौर पर महापाषाण डोलमेनमेनिहिर व ज्यादातर बिछाये गये स्लैब से संबंधित है।

3.7 तेतलाः (23.183461, 85.841710)

राँची जिले के सोनाहातू प्रखंड से संबंधित तेतला एक अन्य महत्वपूर्ण महापाषाणिक स्थल है।

संबंधित अवलोकन

अत्यंत प्राचीन प्रकार के मेगालिथ के प्रमाण प्राप्त होते हैं। 50 से अधिक संख्या में महापाषाणिक पत्थर आयताकार स्लैब में बिछाए गये हैं। इस महापाषाणिक स्थल से संबधित खास पहलू यह है कि "मिट्टी को भूमि से 1 फीट से 2 फीट तक ऊँचा कर, उसके ऊपर से आयताकार स्लैब बिछाया गया है। शवाधान पद्धति से जुड़े इस मेगालिथसंबंधी ज्ञान के संदर्भ में स्थानीय निवासी या जनजाति को तथ्यात्मक या स्पष्ट जानकारी नहीं है।

इसके अतिरिक्त प्राचीन महापाषाणिक स्थल से 50 मीटर आगे नए प्रकार के मेगालिथ अनुष्ठान संपादित किए जाने के प्रमाण मिलते हैं ।

3.8 बलुआडीह–1 (23.253431, 85.782569)

तेतला ग्राम से 2 किलोमीटर आगे बलुआडीह ग्राम स्थित है।

संबंधित अवलोकन

सामान्य प्रकार के प्राचीन स्लैब बिछाए गए हैं। जो शवाधान से संबंधित है।

इसके अतिरिक्त बलुआडीह–11 (23.246012, 85.787225) से 3 बड़े मेनिहिर प्राप्त होते हैं। ग्रामीणों के अनुसार यह शवाधान अनुष्ठान से संबंधित न होकर किसी अन्य कारण से संबंधित है। एक मेनिहिर तकरीबन 10 फीट से अधिक लंबा है वहीं शेष आने दो मेनिहिर की लंबाई 6 फीट के करीब है।

इस प्रकार के मेनिहिर आस–पास के गांव के खेतों में एकाश्म पत्थर के रूप में देखे जा सकते हैं । जो मूलतः स्मृति प्रतीक से संबंधित हो सकते हैं।

3.9 मरिचाडीह – (23.214988, 85.796314)

बलुआडीहसे 5 किलोमीटर पीछे काँची नदी के किनारे स्थित में मेगालिथस्थल।

संबंधित अवलोकन

2500 से अधिक बिछाये गये स्लैब।इस महापाषाणिक स्थल से मुंडा जनजाति के एक मृतक दंपत्ति के नवीन प्रकार केमेगालिथपर लिखित प्रमाण के साक्ष्य उपलब्ध है। इस महापाषाणिक स्थल को नदी के किनारे बालू व्यापार गतिविधियों के कारण संरक्षण की आवश्यकता है।

3.10 जेथाडीह– (23.032628, 85.689364)

संबंधित महापाषाणिक स्थल तमाड़ में स्थित दिऊरी मंदिर से 3 किलोमीटर पीछे स्थित गांव में है।

यहाँ सामान्य प्रकार के मेगालिथस्लैब बिछाए गए हैं जो मुंडा जनजाति से संबंधित हैं।

4. खूंटी जिला से संबंधित महापाषाणिक स्थल –

खूंटी जिला में विशेषतौर पर मुंडा जनजाति का बाहुल्य है। यहां मेगालिथको **'हरसली'**के नाम से जाना जाता है। खूंटी, तोरपा,मुरहूकिताहातू, आरकी इत्यादि प्रखंड से संबंधित अनेक गांवों में महापाषाणिक संस्कृति की परंपरा प्रायः देखने को मिलती है।मुरहू से संबंधित अनेक गांव जहां आज भीमहापाषाणिक संस्कृति पुष्पित पल्लवित हो रही है। इनका पूर्व में हिमांशु शेखर (शोधकर्ता) द्वारा कार्य किया जा चुका है।

खूंटी जिला संबंधित अनेक महापाषाणिक स्थल

4.1 कामरा–(22.897643, 85.132420)

तोरपा प्रखंड से मुरहू जाने वाले मार्ग में यह महापाषाणिक स्थल स्थित है।

संबंधित अवलोकन

मुंडा जनजाति से संबंधित प्राचीन एवं नवीन प्रकार के मेनिहिर व डोलमेन का साक्ष्य प्राप्त होता है। पत्थर की लंबाई 1 फिट से लेकर 8 फीट तक के लंबे पत्थर पर लिखित रूप से साक्ष्य उपलब्ध हैं। जिसमें जीवन की सबसे आधारभूत आवश्यकता **'रोटी'** के संदर्भ में बात की गई है। मृतक व्यक्ति के स्मारक पत्थर पर **'रोटी'** को संदर्भित करना, संभवतः इनके किसी क्षेत्रीय आंदोलन अथवा संघर्ष का द्योतक रहा हो। 50 से भी अधिक संख्या में हरसली (मेगालिथ)पांच अलग–अलग क्षैतिज क्रमबद्ध रूप से स्थापित हैं।

4.2 नोआटोली– (22.894, 85.126)

तोरपा से मूरहू जाने वाले मार्ग में यह स्थल स्थित है ।

संबंधित अवलोकन

एकनवीन प्रकार का एक एकाश्म पत्थर जिसमें एक मुंडा जनजाति (मृतक) का नक्सली मुठभेड़ में मारे जाने से संबंधित पत्थर पर लिखित प्रमाण प्राप्त होता

है। यह बैरो (Barrow) प्रकार का पत्थर है। जिसमें एकाश्म पत्थर पंचनुमा या मंदिर नुमाआकृति में है।

4.3 बालो–1 (22.944, 85.268)

नोआटोली से 1 किलोमीटर आगेयह महापाषाणिकस्थल स्थित है।

संबंधित अवलोकन

सड़क मार्ग के दोनों तरफ में मेनिहिर प्रकार के महापाषाण समूह में गाड़े गये हैं। यह प्राचीन प्रकार का मेगालिथ है।

4.4 बालों–2 (22.942096, 85.230259)

संबंधित अवलोकन

7 फीट लंबे एक एकाश्म पत्थर में ऊर्ध्वाधर क्रम में कप मार्क्स के निशान।

एक अन्य, सड़क के दूसरे तरफ 15 की संख्या मेनिहिर दो क्षैतिज पंक्तिबद्ध क्रम में स्थापित किए गए हैं। दो मेनिहिर एकाश्म पत्थर को कपड़े से लपेटा गया है। ऊपर उल्लेखित मेगालिथ के अतिरिक्त एक अन्य क्षैतिज क्रम में मेगालिथमेनिहिर स्थापित की गई है जिसकी संख्या 12 से अधिक है। ग्रामीणों से प्राप्त जानकारी के अनुसार इन पत्थरों का माघ के माह में पूजा करना और उत्सव मनाना जैसे कार्यक्रम शामिल हैं।

4.5 चारिद–(23.054, 85.314)

खूंटी–तोरपा मार्ग में अवस्थित यह मेगालिथ स्थल गांव से 2 किलोमीटर आगे है।

संबंधित अवलोकन

सामान्य प्रकार के स्लैब बिछाये गए हैं, जो कि झाड़ियों से घिरा है।

4.6 किताहातू– (23°00′ 12.12″N, 85°25′ 15.5″E)

खूंटी से तमाड़ जाने वाले सड़क मार्ग में स्थित

संबंधित अवलोकन

यहॉ पर आकस्मिक मृत्यु से संबंधित मेगालिथ पर लिखित प्रमाण प्राप्त होते है। 10 से अधिक मेनिहिर या बैरो (Barrow) प्रकार के मेगालिथ में भिन्न–भिन्न प्रकार से आकस्मिक मृत्यु का वर्णन है।

इससे 20 मीटर दूरी पर नैसर्गिक मृत्यु से होने वाले व्यक्तियों का पृथक मेगालिथ स्थापित किए जाने के प्रमाण। यह मूलतः मुंडा जनजाति से संबंधित महापाषाणिक स्थल है।

4.7 सोदाक – (23.0028885, 85.608765)

खूंटी से तमाड़ मार्ग में सिंदरी रोड से बायें 2 किलोमीटर अंदरक्षेत्र में स्थित।

संबंधित अवलोकन

नवीन प्रकार के अत्यंत सुंदर डोलमेन, जो छोटे से वस्तुओं को ढ़ोने वाले गाड़ी के समान अर्थात बैरो (Barrow) की भांति दिखता है। केवल दो या तीन प्रकार के बैरो (Barrow)मेगालिथ के प्रमाण मिलते है।

आरिकीप्रखंड के अंतर्गत बांदू व सिरकाडीह महापाषाणिकस्थल हैं जहाँ परबिछाये गये स्लैब प्रकार के मेगालिथ के प्रमाण मिलते हैं।

हजारी बाग जिले से प्राप्त महापाषाणिक शवाधान के साक्ष्य

शवाधान से जुड़े प्राचीन मेनिहिर– पंकरी बरवाडीह, बानादाग एवं लोहसिंघना
(महापाषाणिक स्थल क्रम संख्या – 1.1, 1.2,1.3)

रामगढ़ जिले से प्राप्त महापाषाणिक शवाधान के साक्ष्य

मेगालिथ स्थल – 2.1, (प्रथम 5 चित्र हुहुआ से संबन्धित – पिरामिड नुमाकार आमलक, लोह बर्तन के साक्ष्य एवं अस्थी कलश के साक्ष्य), दायें नापो से संबन्धित मेगालिथ (खगोलीय महत्व)

राँची जिले से प्राप्त महापाषाणिक शवाधान के साक्ष्य

तमाड़–I, तमाड़– II, तमाड़– III से प्राप्त मेगालिथ – डोलमेन प्रकार, मेनिहिर प्रकार एवं बिछाये गये स्लैब (3.2, 3.3, 3.4)

राँची जिले से प्राप्त महापाषाणिक शवाधान के साक्ष्य

चोकाहातू (3.5) से प्राप्त वृहत्तम् प्रकार के डोलमेन व शिष्ट

राँची जिले से प्राप्त महापाषाणिक शवाधान के साक्ष्य

नगड़ी (3.1) , टीले के चारों ओर बिछाये गये स्लैब (उराँव जनजाति के शवाधान पद्धति से संबंधित

तेतला (3.7), प्राचीन डोलमेन प्रकार के आयताकार महापाषाण बलुआडीह–2 से प्राप्त तीन मेनिहिर (स्मृति–प्रतीक से संबन्धित)

खूँटी जिले से प्राप्त महापाषाणिक शवाधान के साक्ष्य

कामरा (4.1), बालो–1 (4.3), बालो–2 (4.4) से संबन्धित पंक्तिबद्ध मेनिहिर एकाश्म पत्थर, किताहातू (4.6) से प्राप्त अकास्मिक मृत्यु संबंधी मेनिहिर महापाषाण के प्रमाण

सर्वेक्षण कार्य के दौरान किये गये महापाषाणिक स्थलों का अवलोकन

क्र.सं.	महापाषाणिक स्थल	अक्षांश, देशांतर	महापाषाण प्रकार	अवलोकन
1.	**हजारीबाग जिला**			
1.1	पंकरी बरवाडीह	23-872370] 85-235132	मेनिहिर, बिछा हुआ स्लैब	21 मार्च और 23 सिंतबर कप मार्क्स
1.2	बाना दाग	23.982, 85.304	मेनिहिर,	✸ कतार बद्ध मेनिहिर ✸ प्राचीन महापषाण ✸ महापषाण स्थापित करने जनजातियों पर विस्थापन।
	लौहसिंघना (कल्लू चौक)	24.005, 85.348	एकाश्म पत्थर (मेनिहिर)	✸ दलित समुदाय (स्थानीय निवासी) द्वारा धार्मिक पूजा
	जबरा कोर्रा	23.999, 85.389	(मेनिहिर)	✸ स्थानीय निवासी द्वारा धार्मिक पूजा के प्रभाव
2.	**रामगढ़ जिला**			
2.1	हुहुआ	23.609, 85.549	मेनीहर, बिछाहुआ स्लैब	✸ पिरामिड नुमा पत्थर जिसके ऊपर में आमलक ✸ पत्थर के नीचे आश्चर्यजनक छिद्र

				✸ अन्य पत्थर के ऊपर आमलक नहीं, पत्थर के ऊपरी भाग में गढ़ढा, कुल संख्या–6
			वर्गाकार पत्थर कुल संख्या – 9	✸ एक अन्य पत्थर में कलाकृतियाँ
			दो घड़े के प्रत्यक्ष प्रमाण	✸ शवाधान में प्रयुक्त घड़े से अस्थि अवशेष का ऊपर बाहर आना
				✸ टूटे हुए सामान्य किस्म के मृदमांड
				✸ महापाषाण से संबधित जनजाति विस्थापित
2.2	नापो	23.699,85.420	मेनिहिर, बिछाया हुआ स्लैब	✸ महापाषाण से संबधित अज्ञात समुदाय वर्तमान स्थल से विस्थापित ✸ ग्रेनाइट पत्थर का प्रयोग ✸ चमकदार पत्थर ✸ आस्ट्रानोमिकल महत्व से संबधित
3.	**राँची जिला**			
3.1	नगरी 1	23.459,, 85.303	उराँव द्वारा बिछाया गया स्लैब व मुंडा जनजाति द्वारा प्रयुक्त मेनिहिर एवं बिछाया स्लैब	अकाास्मिक मृत्यु से संबंधित पृथक उराँव जनजाति महापाषाण उराँव व मुंडा जनजाति के एक ही गाँव में पृथक–पृथक महापाषाणिक गतिविधि
3.2	नगरी 11	23-469984,		एक छोटे से जुड़वा या सटे टीले के चारों

		85-317153		ओर महापाषाण स्थापित।
				50 मीटर दूर पीपल वृक्ष के समीप भी महापाषाण स्थापित
				इसी गाँव के मुंडा जनजाति द्वारा, उराँव जनजाति संबंधी महापाषाण से 200 मीटर दूर पश्चिम में, महापाषाण स्थापित
3.3	तमाड़–1	23-069988, 85-683486	मेनिहिर, डोलमेन बिछा हुआ स्लैब	✸ नजदीकी पहाड़ी से लाया गया ग्रेनाइट व अग्नेय चट्टान के टुकड़े का प्रयोग ✸ 150–200 बिछा हुआ स्लैब ✸ 45°–60° पर झुका हुआ एक एकाश्म पत्थर ✸ तीन छोटे प्रकार के डोलमेन शिष्ट स्मृति के रूप में
3.4	तमाड़–11 बुरूडीह (गाँव)	23-071643, 85-687454	मिश्रित प्रकार के महापाषाण मेनिहिर, डोलमेन शिष्ट, बिछा स्लैब	✸ वृहद आकार के पत्थर या बिछे हुये स्लैब के प्रमाण ✸ 1000–1500 के बीच महापषाण स्थापित ✸ लिखित प्रमाण उपलब्ध ✸ कप मार्क्स
3.5	तमाड़–111 बेसनाडीह (गाँव)	23-073198] 85-690689	बिछा हुआ स्लैब	✸ 25000 से अधिक उक ही प्रकार के बिछाया गया स्लैब महापाषाण ✸ वृताकार स्लैब बिछाये जाने के साक्ष्य ✸ अव्यवस्थित तरीके से स्लैब बिछाये हुए।

3.6	चोकाहातू	23-165582] 85-798820	बिछा हुआ स्लैब डोलमेन शिष्ट मेनिहिर	✸ मुंडा जनजाति से संबंधित सबसे वृहद महापाषाणिक स्थल ✸ 7500 से अधिक महापाषाण ✸ विशेष प्रकार के डोलमेन के प्रमाण ✸ आकार में अत्यंतब बड़े (लगभग 8 फीट) बिछाया गया डोलमेन ✸ कप मार्क्स ✸ एकाश्म पत्थर
3.7	दूलमी	23-183461] 85-841710	छोटे प्रकार के डोलमेन मेनिहिर एवं बिछाया हुआ स्लैब	✸ 1000 से अधिक महापाषाणिक पत्थर ✸ छोटे प्रकार के बिछाये हुए स्लैब ✸ कुछ डोलमेन के प्रमाण ✸ कुछ मेनिहिर के प्रमाण
3.8	तेतला	23-183461] 85-841710	आयताकार बिछाये गये स्लैब	✸ भूमि से ऊपर मिट्टी का छोटा सा टीला बनाकर उसके उपर स्लैब बिछाये जाने के साक्ष्य ✸ विचित्र प्रकार के माहापाषाण ✸ 50 से अधिक संख्या में ✸ प्राचीन महापाषाणिक संस्कृति का प्रमाण। ✸ आधुनिक महापाषाणिक गतिविधि 50 मीटर दूर में सम्पादित किया जाता है।
3.9	बलुआडीह–1	23-253431] 85-782569	बिछाया हुआ स्लैब	✸ अत्यंत प्राचीन प्रकार के बिछाया गया स्लैब

				✸ सड़क के दोंनो और स्थित ✸ कुल संख्या 40 से अधिक
3.10	बलुआडीह–11 (सालसूद)	23-246012] 85-787225	तीन एकाश्म पत्थर मेनिहिर	✸ सड़क किनारे खेत में स्थित तीन मेनिहिर ✸ जिसका संबंध संभवतः शवाधान गतिविधि से नही है। ✸ आस–पास के गाँव के खेतों में ऐसे पत्थर स्थापित किये जाने का साक्ष्य प्राप्त
3.11	मरिचाडीह (काँची नदी के समीप)	23-214988] 85-796314	मेनिहिर, डोलमेन	✸ प्राचीन एवं नवीन प्रकार के महापाषाण ✸ 2000 से अधिक की संख्या में स्लैब बिछाया गया। ✸ एक दंपति का एक साथ महापाषाण स्थापित (डोलमेन प्रकार) ✸ मुंडा जनजाति से संबंधित ✸ एक साथ चार छोटे–छोटे एकाश्म पत्थर गड़े हैं। इसके ऊपर का बिछाया गया डोलमेन नही है। ✸ इस स्थल को महापाषाणिक संस्कृति को संरक्षण की आवश्यकता
3.12	जेथाडीह (दिऊरी)	23-032628] 85-689364	बिछा हुआ स्लैब	✸ प्रसिद्ध दिऊरी मंदिर से पिछे 3 किलोमीटर पर स्थित गाँव ✸ गाँव के सबसे किनारे छोर पर स्थापित ✸ 100 से अधिक शवाधान से संबन्धित

				बिछाये गये स्लैब
4.	**खूँटी जिला**			
	कामरा	22.897643, 85.132420	मेनिहिर बिछा हुआ स्लैब	✸ लिखित प्रमाण ✸ एक फीट से 8 फीट ऊँचे महापाषाण पत्थर ✸ कतारबद्ध 4 से 5 क्षैतिज पंक्ति में स्थापित ✸ प्राचीन व नवीन दोनों प्रकार के एकाश्म पत्थर ✸ कुल संख्या 50 के आस–पास
4.2	नोआटोली –2	22.894, 85.126	मेनिहिर डोलमेन बिछा हुआ स्लैब	✸ 20 से 25 की संख्या में प्राचीन बिरिदीरि
4.3	नोआटोली–2		Barrow	✸ मंदिर आकारनुमा खड़ा महापाषाण ✸ उग्रवादी हमले में मृतक को इस महापाषाणिक स्थल में पृथक से गाड़ा जाना।
4.4	बालो–1	23.021, 85.193	मेनिहिर	✸ सड़क के दोनों ओर मेनिहिर ✸ मुरहू (प्रखंड) जाने क्रम से सड़क के दायें तरफ 40 की संख्या में तथा बायें तरफ 15–20 की संख्या में मेनिहिर ✸ कतार बद्ध ✸ एका फीट से लेकर 10–11 फीट तक

				के एकाश्म पत्थर। ✸ प्राचीन पत्थर
4.5	बालो–2	22-942096] 85-230259	मेनिहिर	✸ क्षैतिज रूप से मेनिहिर को क्रम बद्ध दो श्रेणियाँ स्थापित ✸ 20–25 मेनिहिर ✸ कपड़े से लिपटा मेनिहिर ✸ एक एकाश्म पत्थर मे कप मार्क्स ✸ एक अन्य क्षैतिज रूप में पंक्ति बद्ध मेनिहिर की 15 एकाश्म पत्थर
4.6	चारिद	22.019202, 85.286303	मेनिहिरो, बारो, बिछा हुआ स्लैब	✸ सड़क से 1 किलोमीटर अंदर ✸ झाड़ियों से ढ़के हुए स्लैब
4.7	किताहातू	23.054, 85.314	मेनिहिर, बिछा हुआ स्लैब, बैरो (दो पहियों का छोटा ठेला जैसा आकार दिखने वाला)	✸ अकास्मिक मृत्यु के विभिन्न प्रकरण से संबन्धित महापाषाणिक पत्थरों के लिखित प्रमाण ✸ सामान्य पारंपरिक महापाषाणिक रूथ्सल ये कुछ दूर हटकर इसे स्थापित किया गया। ✸ इसके कुछ दूर पर पारंपरिक व नैसर्गिक मृत्यु से होने वाले महापाषाणिक पत्थर
4.8	सोदाक (सिंदरी)	23.0028885 85.608765	मेनिहिर एवं बिछा हुआ स्लैब,	✸ बैरो प्रकार की कुछ महापाषाणिक पत्थर ✸ झाड़ियों से घिरा हुआ।

				✸ नवीनतम् प्रकार के शवाधान के साक्ष्य
4.9	बांदू	23.057371 85.6250	बिछा हुआ स्लैब,	✸ गाँव के बीच में 40 के आस–पास की संख्या में स्लैब बिछा हुआ। ✸ कुछ मेनिहिर प्रकार के महापाषाण ✸ अव्यवस्थित तरीके से बिछाये गये स्लैब
4.10	सिरकाडीह	23.056500 85.621501	बिछा हुआ स्लैब,	✸ अव्यवस्थित तरीके से बिछाये गये स्लैब ✸ मुंडा जनजाति से संबंधित

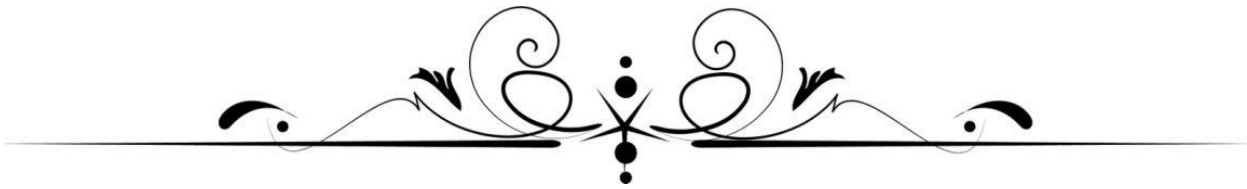

अध्याय–चतुर्थ

मिथक, परम्परायें एवं सामाजिक संस्कृति

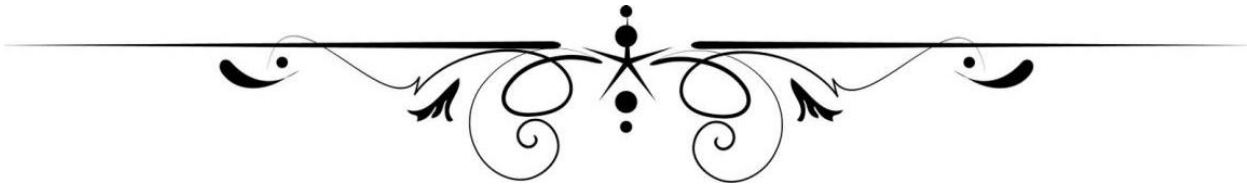

अध्याय–चतुर्थ

मिथक, परम्परायें एवं सामाजिक संस्कृति

यह अध्याय मूल रूप से छोटानागपुर की जनजातियों के संज्ञानात्मक समझ पर आधारित 'सामाजिक–धार्मिक मि़थकीय मान्यताओं व व्यवहार में अपनाये जाने वाले पारपंरिक–अनुष्ठान व सामाजिक संस्कृति पर आधारित है। यह अध्याय महापाषाणीय शवाधान पद्धति के मूल में निहित उन तत्वों को उद्भाषित करता है, जिसका संबंध अधाराणात्मक एवं व्यवहारिक दोनों संदर्भों से हैं। जहॉ एक ओर मि़थकीय अभिधारणा का संबंध उन मानसिक क्रियाकलापों है, से जो इस महापाषाण परंपरा के सैद्धान्तिक पक्ष व इनसे जुड़े लोक आस्था, अंधविश्वास, शोक अनुष्ठान, पूर्वजन्म की धारणा को ध्यान में रखते हुए महापाषाण की जीवंत प्रथा को आधुनिक युग में अपने संस्कृति का अटूट हिस्सा बनाये रखने में सहयोग करती है। वही दूसरे पक्ष का अध्ययन 'परंपराओं' अर्थात् व्यवहार में शवाधान पद्धति में सम्मिलित किये जाने वाले अनुष्ठान व कर्मकांड से हैं।

जहॉ एक तरफ मि़थकीय अवधारणा, संस्कृति के संज्ञानात्मक पक्ष से संबंधित है। वही दूसरी ओर इस परंपरा का आशय व्यवहार में प्रयोग किये जाने वाले सामाजिक–संस्कृति, रीति–रिवाजों व अनुष्ठानों से है। अति प्राचीन महापाषाणिक शवधान परंपरा वर्तमान में की छोटानागपुर की जनजातियों की जीवित प्रथा है, प्रश्न है कि असल में वह कौन सी संज्ञानात्मक अभिधारणा (मि़थकीय पक्ष) निहित है, जिनसे प्रेरित होकर महापाषाणिक शवाधान परंपरा को अपनी जनजातीय संस्कृति से संजोये रखा है।

मिथक–

अतेंष्ठि–संस्कार से संबंधित छोटानागपुर पठार क्षेत्र की महापाषाणिक परंपरा अत्यंत रोचक लगती है, जब प्रत्येक गॉव में महापाषाण/हड़गड़ी संपादित करने की

प्रथा में सूक्ष्म विविधता व पृथकता जान पड़ता है। वैसे प्रत्येक जनजाति समूह की हड़गड़ी/महापाषाण परंपरा में स्पष्ट व व्यापक अंतर अभिलक्षित होता हैं। उदाहरण के तौर पर, हो जनजाति के मेनिहिर पाषाण की ऊँचाई मुंडा जनजाति के मेनिहिर (बीरीदीरी) पाषाण की ऊँचाई से अधिक होती है। उरॉव जनजाति समूह पर ईसाई धर्म का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है, उरॉव की महापाषाणिक परंपरा में मेनिहिर (बीरीदीरी) का प्रचलन अत्यंत अल्प मिलता है। इस तरह ये उदाहरण अलग–अलग जनजातीय समूह से संबंधित है। लेकिन एक ही जनजाति बाहुल्य जिले या क्षेत्र में शवाधान पद्धति के नियमों व पद्धतियों में भी विविधता दिखाई पड़ती है, यह विविधता न केवल भौगोलिक–कारणों से हुई है वरन् भिन्न क्षेत्रों में उनकी सामाजिक सहजता, आर्थिक गतिविधियों, अन्य धर्मों के प्रभाव से, मिथकीय लोक आस्था व लोक विश्वास में अंतर होने से एक ही जनजाति समूह के पृथक–पृथक महापाषाणिक क्षेत्र में होने वाले भिन्न–भिन्न महापाषाणिक अनुष्ठान पद्धति में विविधता व अंतर परिलक्षित होता हैं।

लोक मान्यताओं के अनुसार 18 वर्ष के नीचे के नाबालिक लड़के/लड़कियॉ जिनका कर्ण भेद नहीं हुआ है उसे गॉव के महापाषाणिक स्थल से पृथक 100 या 200 मीटर दूर पर या गॉव के सीमांत क्षेत्र में उस नाबालिक मृतक का महापाषाणिक अंतेष्ठि संस्कार किया जाता है। इसके पीछे मिथक अभिधारणा है कि इसकी (नाबालिक) मृतक की उचित उम्र में मृत्यु न होने इसकी आत्मा शांत नहीं रहती, वस्तुतः इसे महापाषाणिक स्थल में हड़गड़ी नही संपादित किया जा सकता है। इसी प्रकार मुंडा व उरॉव जनजाति समूह से प्राप्त आकस्मिक मृत्यु से संबंधित लोगों का पृथक महापाषाणिक अनुष्ठान संपन्न किया जाता है। किताहातू (खूँटी जिले) से प्राप्त प्रमाण में सभी आकस्मिक मृत्यु से संबंधित पेड़ गिर जाने के कारण मृत्यु, सांप काटने से मृत्यु, आग लग जाने से मृत्यु, सड़क दुर्घटना से मृत्यु, आत्महत्या से संबंधित मृत्यु या किसी नक्सल घटना में मारे जाने वाले) व्यक्तियों का मुख्य महापाषाणिक स्थल से 50 मीटर की दूरी पर सभी आकस्मिक मृत्यु से संबंधित मृतकों का पृथक हड़गड़ी/महापाषाण संपादित किया गया था। (चित्र संख्या–1)

यह उदाहरण मिथक अभिधारणा से संबंधित है। ग्रामीणों के अनुसार मुख्य महापाषाण स्थल में आकस्मिक मृत्यु से संबंधित हड़गड़ी/महापाषाण अनुष्ठान नहीं किया जा सकता, कारण कि इनका मुख्य महापाषाण स्थल में स्थित प्राकृतिक मृत्यु से संबंधित आत्मा को कष्ट बढ़ेगा और गॉव में आकस्मिक मृत्यु से संबंधित घटना का विस्तार होगा।

मिथक अवधाराणा के अनुसार जनजाति समुदाय को लोक मान्यता है कि मृत्यु पश्चात् मृतक की एक अलग दुनिया होती है, वस्तुतः मृतक का हड़गड़ी/महापाषाण अनुष्ठान करने के पश्चात् इन्हे 'स्थाई' कर दिया जाता हैं, तथा स्मरण स्वरूप महापाषाणिक स्थल पर पाषाण को धोकर, हल्दी व सरसों तेल का लेप लगा कर मिट्टी के भीतर पत्थर को प्रतिस्थापित कर दिया जाता हैं। इनके (मृतक) के भोजन के लिए एवं उनकी आत्मा की शांति के लिए बकरे या मुर्गे की बलि भी दी जाती है। दीप जलाये जाते है (टोपनो, 1955, 775 : 734)। इन महापाषाण पत्थरों को कही–कहीं अपने 'रिवाज के अनुसार' वर्ष में एक बार पुनः दीप व भोजन अर्पण किया जाता है। (शेखर, 2017, 65–74) यह उदाहरण इस बात की ओर संकेत करता है कि जनजाति समुदाय मुत्यु पर जीवन की मिथकी संकल्पना को न केवल स्वीकार करते है वरन् मृतक की आत्मा दूसरे दुनिया में न भटके इसके लिए हड़गड़ी अनुष्ठान कर उन्हें स्थाईत्व प्रदान करना भी वांछनीय मानते है।

यदि समयानुसार मृतक के लिए हड़गड़ी अनुष्ठान कर उन्हें स्थाईत्व प्रदान न किया गया, तो प्रकोप स्वरूप परिवार सदस्य, रिश्तेदार व गॉव के लोगों इससे अत्यन्त प्रकार की क्षति होने की संभावना हो सकती है, ऐसी लोक विश्वास जनजाति समुदाय में सामान्य रूप से प्रचलित हैं।

वस्तुतः लोक आस्था व लोक विश्वास से जुड़े मिथक संबंधित अवधाराणा के बदलने मात्र से महापाषाण पारंपरिक अनुष्ठान में क्षेत्र–दर–क्षेत्र विविधता अनुभव किया जाता है। ये मिथक पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक व मानसिक चेतन के रूप हस्तान्तरित होते रहे

हैं। मिथकतावादी महापाषाण लोकपरंपरा पूर्वजों के प्रति अपार श्रद्धा व सम्मान का प्रतीक हैं। पूर्वजों के प्रति अथाह निष्ठा का प्रमाण **दीरी–कॉपी** (मुंडारी शब्द) नामक सामाजिक उत्सव में दिखाई देता है। वर्ष में एक बार शीत फसल कटने के बाद दीरी–कापी उत्सव मनाया जाता हैं (शेखर, 2017, 65–74)। इस उत्सव में पूर्वजों के नाम पर महापाषाणिक पत्थरों को धोयें जानें, पत्थर पर हल्दी लगाने व सरसों का तेल लगाने तथा दीप जलाने का प्रचलन है।

यह उत्सव इस लोक मिथक पर आधारित है कि पूर्वज–पूजन से वर्ष भर पूर्वजों की दयालुता व आशीर्वाद प्राप्त होता है। ऐसा न करने की स्थिति में वर्ष भर आकस्मिक दुर्घटना या अन्य महामारी का प्रकोप झेलना पड़ सकता हैं।

छोटानागपुर के महापाषाणिक जनजाति समुदाय में पूर्वज–आराधना के पीछे निहित मिथक लोक विश्वास व स्थानीय मान्यता महत्वपूर्ण स्थान रखती । ये लोक विश्वास व मिथक मान्यता पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानान्तरित हुई है। ये मिथक विश्वास महापाषाणिक पारंपरिक अनुष्ठान से अभिव्यक्त तो होती ही है, साथ ही साथ यही लोक विश्वास महापाषाणिक जनजाति समुदायों में या एक ही महापाषाणिक जनजाति समुदाय के क्षेत्र दर क्षेत्र महापाषाणिक अंतर को दर्शानें में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

मिथक का संबंध केवल महापाषाण के स्थापना होने के पूर्व तक ही सीमित नहीं होता है अपितु महापाषाण के स्थापित होने के पश्चात् भिन्न–भिन्न क्षेत्र में महापाषाण संबंधी भिन्न–भिन्न धारणा परिलक्षित होती है। उदाहरणार्थ, बलुआडीह (रॉची जिला) में बुरू–बोंगा (मुंडा देवता) के रूप में मेनिहिर को पूजा जाता है। वही एक अन्य महापाषाण स्थल में महापाषाणिक पत्थर को छुआ तक नहीं जाता। रॉची जिलें के लिए दीरसीर नाम गॉव में लोग स्थानीय न्यायालय में केस संबंधी विजय प्राप्त करने की इच्छा से, न्यायालय में जाने से पूर्व महापाषाणिक पत्थरों की पूजा करते है (शेखर, 2015, 255–269)।

आम जनजातीय समुदायों में 'मृत्यु पश्चात् जीवन' की अवधारणा संबंधित में मृतक व्यक्ति के आत्मा से होने वाले अनेक क्षति पहुँचानी वाली मान्यता प्रचलित है। आम जनजातियों में यह मान्यता प्रचलित है। आम जनजातियों में यह अवधारणा भी प्रचलित है मृतक व्यक्ति को वंशज महापाषाण स्थल (खूँट कट्टी) में स्थापित करने से पारिवारिक, आर्थिक समृद्धि आती है। वर्ष के अंत में कृषि से अच्छी फसल आती हैं। इस प्रकार के मिथकीय अवधारणा के प्रमाण मौखिक स्रोत के रूप में प्राप्त होते है। इसके लिखित प्रमाण अत्यन्त अल्प है। वस्तुतः इन जानकारियों को संग्रह करने का उपलब्ध स्रोत मौखिक ही है। हालांकि मौखिक स्रोत को प्रयोग किया जाना अत्यंत सावधानीपूर्वक व चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस प्रकार के मौखिक स्रोत आम जनजाति समुदाय में आपस में ही प्रचलित है। इस संदर्भ में जानकारी जनजाति समुदाय के पाहन, जनजाति समुदाय के वरिष्ठ व्यक्ति या सामाजिक व्यक्तियों को ही महापाषाणिक अनुष्ठानिक गतिविधि संबंधी लोक मान्यताओं, लोक विश्वासों को लेकर मिथक जानकारी पता है। सामान्य जनजाति व युवा जनजाति सामान्य तौर पर इस मिथक परंपरा व अनुष्ठानिक गतिविधि संबंधी अत्यन्त सीमित जानकारी रखते हैं। यह परम्परा मृतक अंतेष्ठि परंपरा से संबंधित होने के कारण युवा जनजाति में चर्चा का विषय न होने के कारण जागरूकता का अभाव है, या अन्य कारणों से जागरूकता का अभाव है, यह बताना जटिल कार्य है। सुव्यवस्थित व वैज्ञानिक उत्खनन के अभाव से मिथकीय धारणा में सुधार की गुंजाईश को सीमित जगह मिल पाई हैं।

सन् 1872 छोटानागपुर की महापाषाण परंपरा का आरम्भिक उल्लेख ई0टी0 डॉल्टन ने चोकाहातू नामक वृहद महापाषाणिक स्थल का किया। इसके पश्चात् एस0सी0 रॉय के दिशा–निर्देशन में भारतीय पुरातत्व विभाग द्वारा खूँटी टोली (खूँटी जिला, झारखण्ड) नामक महापाषाणिक स्थल का उत्खनन कार्य सम्पन्न कराया (दास, 2009)।

छोटानागपुर की महापाषाण परंपरा दक्षिण भारत व अन्य महापाषाणिक स्थलों की भॉति अत्यन्त अति प्राचीन हैं। पिछले दो दशकों में झारखण्ड के अत्यन्त महत्वपूर्ण प्राचीन महापाषाणिक स्थलों को उद्घाटित किया गया है। एस0सुभाषिश दा, हिमांशु

शेखर इत्यादि शोधकर्ताओं ने झारखण्ड के कई प्राचीन महापाषाणिक स्थलों का अवलोकन व अध्ययन किया हैं। ये महत्वपूर्ण प्राचीन महापाषाण स्थल हजारीबाग जिला, चतरा जिला, रामगढ़ जिला, लोहरदगा रॉची जिला, खूँटी जिला व पश्चिम सिंहभूम जिला इत्यादि क्षेत्र से संबंधित (दास, 2009)। वैसे छोटानागपुर के महापाषाणिक परंपरा का आरंम्भिक तिथि निश्चित रूप से निर्धारित नहीं की गई हैं। किन्तु प्राचीन महापाषाण स्थलों से प्राप्त पुरावशेष प्रमाणों के अनुसार महापाषाण परंपरा की तिथि 600 ई0 पूर्व के आस–पास निर्धारित माना जा सकती है।

महा**पाषाण परम्परा–**

परंपरा, सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना का वह प्रतिकात्मक रूप है, जिसका प्रयोग सदियों से पीढ़ी दर पीढ़ी व्यवहारिक रूप में प्रयोग किया जाता रहा हैं। छोटा नागपुर जनजाति की शवाधान परंपरा अति प्राचीन काल से जिस रूप में प्रयोग में लायी जाती थी, पीढ़ी–दर–पीढ़ी समय दर समय कमोवेश थोड़े–बहुत संशोध के साथ वर्तमान युग में जीवंत परंपरा के रूप में व्यवहार में प्रयोग लायी जाती है।

इस परंपरा का विशद उल्लेख एस0सी0रॉय (1912, 1915) एम0 टोपनो (1955) ने अपने लेखन कार्य में किया हैं। एम0 टोपनो (1955) ने सविस्तार मुंडा जनजाति के शवाधान पद्धति का व्यवहारिक उल्लेख किया है। वी0के0 मोहंता (2015) ने क्योक्षौर व मयूरभंज (उड़ीसा) के हो जनजातियों के शवाधान परंपरा का उल्लेख किया है। जिसमें मेनिहिर, अस्थि–कलश, डोलमेन सार्कोफेगस इत्यादि शवाधान पद्धति शामिल है। तीसरे प्रकार का महापाषाण शवाधान परंपरा को गैर–शवधान प्रकृति का माना जाता है। यू0एस0 मूर्ति ने महापाषाण परंपराओं को दो भागों में विभक्त किया है, प्रथम शवाधान पद्धति से संबंधित हैं। दूसरा, गैर–शवाधान पद्धति से संबंधित हैं।

झारखण्ड में शवाधान परंपरा प्रायः दो प्रकार से संपादित की जाती है। प्रथम 'प्राथमिक शवाधान' से जुड़ा है, जिसके अंतर्गत शव को सीधे तौर पर कब्र में दफनाने की परंपरा है। कब्र में मृत व्यक्ति के द्वारा पूर्व में प्रयोग में लाये जाने वाले धातु

औजार, मुँह में सिक्के रखकर तथा कब्र में ही चावल, हल्दी इत्यादि रखकर शव को दफनाया जाता है। दूसरे प्रकार शवाधान परंपरा द्वितीयक शवाधान पद्धति पर आधारित हैं। द्वितीयक शवाधान पद्धति के अंतर्गत शव को सर्वप्रथम जलाया जाता हैं जिस स्थल पर शव के साथ जलाया जाता है, मुंडारी भाषा में उसे **'मसना'** कहा जाता है। इसके पश्चात् जलाये शव के कुछ हड्डी को एक 'चुकिया' मिट्टी बर्तन में एकत्रित किया जाता है। इस 'चुकिया' को अगले दस दिन तक किसी पेड़ के टहनी पर लटकाकर इस 'चुकिया' को संरक्षण दिया जाता है। कुछ स्थान पर 'चुकिया' को पेड़ के नीचे गड्ढे खोदकर अंदर रखने की परंपरा का उल्लेख मिलता है, ऐसा तब किया जाता है जब जगन्टोपा हड़गड़ी अनुष्ठान (महापाषाण स्थापित करने की परंपरा) शीत फसल कटने के बाद संपादित की जाती हो। यदि दसकर्म (दसवें दिन के बाद) के बाद ही 'जग–टोपा'/हड़गड़ी अनुष्ठान संपादित करना हो तो, प्रायः 'चुकिया' (मिट्टी बर्तन) को धुवी घास के पुतले के साथ किसी स्थान पर या पेड़ की टहनी पर लटका दिया जाता है। अर्थात् द्वितीयक शवाधान पद्धति में पहले शव को जलाया जाता है। इसके पश्चात् जले शव में से आखिरी के कुछ हड्डी के अवशेष को चुकिया में रखकर महापाषाणिक स्थल में जाकर शव के स्थान पर चुकिया व एकत्रित हड्डी को स्थानीय पाहन (पुरोहित) के दिशा–निर्देश में विधिवत मंत्रोच्चारण एवं अन्य अनुष्ठान की सहायता से हड़गड़ी कार्यक्रम सम्पन्न किया जाता है। इसके सम्मान पर वहॉ एक विशाल 'महापाषाण' स्थापित किया जाता है। जिसे मुंडारी भाषा में क्षैतिज स्लैब या डोलमेन प्रकार के पत्थर को 'सासनदीरी' तथा मेनिहिर प्रकार के पत्थर को 'बीरीदीरी' कहा जाता है (टोप्पनो, 1955)। एम0टोपनो (1955) ने अपने लेख 'फ्यूनरल राइट्स ऑफ द मुंडाज ऑन द रॉची प्लेस्यू' में प्राथमिक शवाधान पद्धति व द्वितीयक शवाधान पद्धति का उल्लेख किया हैं।

हो जनजाति समुदाय मूलतः अपने घर के ही निकट अंतेष्ठि अनुष्ठान संपादित करते है। हो जनजाति शव जलाने के बाद शरीर के अलग–अलग भाग के हड्डी को चुकिया में डालकर पत्थरगड़ी (महापाषाण परंपरा) संपादित करते है। इसे 'जग–टोपा'

भी कहा जाता है। इसका उल्लेख बी0के0 मोहंता, हिमांशु शेखर इत्यादि शोधकर्ताओं ने किया हैं (शेखर, 2017, 65–74)।

हिमांशु शेखर ने अपने लेख में जेथाडीह गॉव (तमाड़ प्रखंड़, रॉची जिला) का उल्लेख किया है जहॉ प्राथमिक शवाधान पद्धति व द्वितीयक शवाधान पद्धति संपादित की जाती है (शेखर, 2015)। यह महापाषाणिक स्थल पूर्व में असुर जनजाति से संबंधित थी, किन्तु वर्तमान में मुंडा जनजाति/हड़गड़ी संपादित करते है। मैने जिन महापाषाणिक स्थल का अवलोकन व अध्ययन किया है। उनका संबंध अधिकतर द्वितीयक शवाधान पद्धति से रहा है। जीवंत परंपरा रॉची जिले व खूँटी जिले में महापाषाणिक परंपरा द्वितीयक शवाधान परंपरा से संबंधित है। हालांकि इसके क्षेत्र में मुंडा जनजाति समुदाय की बहुलता है।

छोटानागपुर के जनजाति समुदाय में अप्राकृतिक रूप से मृत व्यक्ति के लिए महापाषाणिक अनुष्ठान स्थानीय महापाषाणिक स्थल में न संपादित कर गॉव के ही किसी सड़क के किनारे या गॉव के किसी सीमांत स्थान पर अप्राकृतिक रूप से मृतक व्यक्ति के लिए पृथक रूप से हड़गड़ी संपादित किये जाने की परंपरा है (चित्र संख्या–1)।

इस प्रकार हड़गड़ी परंपरा (महापाषाणिक परंपरा) में प्राकृतिक रूप से मृत व्यक्ति का तथा अप्राकृतिक रूप से मृत व्यक्ति अर्थात् जिनका मृत्यु असामयिक या अकास्मिक रूप से किसी दुर्घटना वश, तड़ित–विद्युत के गिरने से, पेड़ के गिरने से व्यक्ति की मौत होने से, सॉप के डसने से मौत हो जाने या किसी अन्य किसी कारणों से अकास्मिक मृत्यु होने पर महापाषाणिक अनुष्ठान को पृथक–पृथक रूप से संपादित किया जाता है। (चित्र संख्या–1)

मुंडा समुदाय में अप्राकृतिक रूप से मृतक व्यक्ति के लिए प्रायः मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैव जैसे महापाषाण पत्थरों का प्रयोग किया जाता है। केवल डोलमेन प्रकार

के पत्थर को अकास्मिक या अप्राकृतिक रूप से मृतक व्यक्ति के लिए प्रयोग में लाये जाने के प्रमाण न के बराबर मिले है।

यद्यपि इसका यह अर्थ नहीं है कि महापाषाणिक स्थल से प्राप्त 'मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब' का संबंध सिर्फ अप्राकृतिक मृत्यु से है। अप्राकृतिक कारणों से मृत व्यक्ति का हड़गड़ी अनुष्ठान सामान्य सामुदायिक महापाषाण स्थल में न कर पृथक रूप से संपादित किये जाने की परंपरा है। हालांकि सभी 'मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब' प्रकार के महापाषाण पत्थर का संबंध अप्राकृतिक मृत्यु से नहीं है। तथापि अप्राकृतिक रूप से मृतक व्यक्ति के लिए ज्यादातर 'मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब' या केवल मेनिहिर प्रकार के महापाषाणिक पत्थर को प्रयोग में लाये जाने की परंपरा है। नगड़ी (रॉची जिला) नामक गॉव से प्राप्त साक्ष्य के अनुसार उरॉव जनजाति अकास्मिक रूप से सभी मृतकों के लिए केवल 'क्षैतिज स्लैब' का ही प्रयोग किया है। उरॉव व हो जनजाति भी अप्राकृतिक मृत व्यक्ति का हड़गड़ी अनुष्ठान प्राकृतिक रूप से मृत व्यक्ति के महापाषाण स्थल से पृथक हटकर हड़गड़ी परंपरा सम्पन्न करती हैं (चित्र संख्या–2)।

इस श्रेणी में नाबालिक बच्चों को भी रखा गया है। छोटानागपुर से संबंधित महापाषाणिक पत्थरों शवाधान से संबंधित के प्रकार की बात की जाये तो हिमांशु शेखर महोदय ने महापाषाणिक पत्थरों शवाधान से संबंधित के आधार पर छः भिन्न–भिन्न प्रकार महापाषाणिक स्थलों का उल्लेख अपने लेख में किया है। महापाषाणिक स्थलों के अध्ययन से मैने सात अलग–अलग प्रकार के महापाषाणिक पत्थरों का अवलोकन किया।

1. डोलमेन (शासनदीरी)
2. क्षैतिज स्लैब (शासनदीरी)
3. मेनिहिर (बीरीदीरी)
4. सामूहिक मेनिहिर

5. मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब
6. मेनिहिर के साथ डोलमेल
7. स्टोन सर्कल

यद्यपि क्षैतिज स्लैब, डोलमेन के केपस्टोन पर व मेनिहिर प्रकार के महापाषाणिक पत्थरों पर कप मार्क्स के व्यापक प्रमाण मिलें है (चित्र संख्या–3)।

कुछ कपमार्क्स में पोर्टहॉल के भी प्रमाण मिले हैं। कपमार्क्स का संबंध परंपरा के किसी मिथक विश्वास से है या अन्य किसी तकनीकी कारणों से, स्पष्टतः प्रमाण नही मिलते। इस संदर्भ में रॉची के महापाषाण स्थलों पर जाकर इनसे जुड़े लोगों से बात करने से यह ज्ञात हुआ कि इस पर बच्चे गड्ढ़े बनाकर गिट्टी (पत्थर का छोटा टुकड़ा) के खेल खेलते है। इसके पीछे अन्य कारणों की स्पष्ट जानकारी महापाषाण से संबंधित लोगों को नहीं थी। कपमार्क्स से संबंधित ऐसे ही खेल का उल्लेख श्री सुभाशिष दा ने अपने लेख ''अ ब्रीफ स्टडीज ऑफ कप्स ऑफ अ फ्यू मेगालिथिक साइट इन झारखण्ड'' में वर्णित किया हैं।

1. डोलमेन–

डोलमेन को मुंडारी भाषा में शासनदीरी कहा जाता है। डोलमेन प्रकार के महापाषाण में प्रायः चार या दो ब्लाउडर होता है में प्रायः भाषा में ''पंचारी–दीरी'' कहा जाता है। इस ब्लाउडर के ऊपर क्षैतिज स्लैब (केपस्टोन) को लिटा दिया जाता है। डोलमेन प्रकार के पत्थर प्रायः महापाषाण शवाधान परंपरा से संबंध रखते है न कि गैर शवाधान परंपरा से। बावजूद इसके सर्वेक्षण के दरम्यिान मैने बुरूडीह (तमाड़, प्रखण्ड, रॉची) में तीन डोलमेन, जिन्हें महापाषाणिक स्थल से बिल्कुल पृथक स्थापित किया गया था, का मैने अवलोकन किया। उन ग्रामीणों के अनुसार उन तीनों डोलमेन का संबंध हड़गड़ी परंपरा से नहीं है। (चित्र संख्या–4.1)।

2. क्षैतिज स्लैब (शासनदीरी)–

क्षैतिज स्लैब प्रकार के महापाषाणिक पत्थर को भी मुंडारी भाषा में शासनदीरी कहा जाता हैं। छोटानागपुर के महापाषाणिक पत्थरों में सर्वाधिक प्रयोग क्षैतिज स्लैब प्रकार के महापाषाणिक पत्थर का किया गया है। कई क्षैतिज स्लैब के ऊपर 'कप मार्क्स' के साक्ष्य सरलता से प्राप्त होते है। (चित्र संख्या–4.2)।

3. मेनिहिर (बीरीदीरी)–

मेनिहिर को मुंडारी भाषा में ''बीरीदीरी'' कहा जाता है। छोटानागपुर के प्राचीन महापाषाणिक स्थलों से मेनिहिर के सर्वाधिक प्रमाण प्राप्त होते है। तथापि मेनिहिर प्रकार के पत्थर का प्रयोग जीवंत परंपरा में भी अपनाया जाता है। वैसे प्राचीन महापाषाणिक स्थल जहॉ से मेनिहिर के प्रमाण प्राप्त होते है उनमें हजारीबाग से संबंधित, चतरा से संबंधित, रामगढ़ से संबंधित, रॉची से संबंधित व पश्चिम सिंहभूम से सम्बंधित इत्यादि महापाषाणिक स्थल प्रमुख है। पंकरी बरवाडीह, नापो व रोला (सभी हजारीबाग जिला) के प्राचीन मेनिहिर का संबंध खगोलीय दृष्टिकोण से है, जिसका अध्ययन श्री सुभाशिष महोदय द्वारा किया गया है। (दास, 2015) (चित्र संख्या–4.3)।

4. सामूहिक मेनिहिर :

सामूहिक मेनिहिर का सर्वाधिक प्रचलन मुंडा जनजाति में है। इस प्रकार के महापाषाणिक पत्थर का प्रमाण रॉची व खूँटी जिले से अधिक प्राप्त हुए है। (चित्र संख्या–4.4)।

5. मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब–

मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब की परंपरा भी अधिकतर मुंडा जनजाति समुदाय में दिखाई पड़ती है। अधिकतर अकास्मिक मृत्यु से संबंधित महापाषाणिक पत्थरों में मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब का अधिक प्रयोग किया गया है। इसका यह आशय नहीं है कि अकास्मिक मृत्यु से संबंधित सभी महापाषाणिक पत्थर केवल 'मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब' प्रकार के पत्थर से ही है। न ही यह अर्थ है कि सभी 'मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब' प्रकार के पत्थर का प्रयोग केवल

आकस्मिक मृत्यु या अप्राकृतिक मृत्यु से संबंधित है। हो जनजाति में आकस्मिक मृत्यु के लिए मेनिहिर का प्रयोग तथा उरॉव जनजाति में अकास्मिक मृत्यु के लिए क्षैतिज स्लैब का प्रमाण नगड़ी (रॉची जिला) से प्राप्त हुए है। चित्र संख्या। इस प्रकार के पत्थर रॉची व खूँटी में अधिक मिले है (चित्र संख्या–4.5)।

6. मेनिहिर के साथ डोलमेन–

चोकहातू (रॉची जिला), अमलेशा (रॉची जिला), अकरी प्रखंड (खूँटी जिला) के कुछ महापाषाणिक स्थलों से 'मेनिहिर के साथ डोलमेन' प्रकार के पत्थर पाये गये है। (चित्र संख्या–4.6)।

7. स्टोन सर्कल–

स्टोन सर्कल के प्रमाण अत्यन्त सीमित मात्रा में प्राप्त होते है। श्री हरेन्द्र सिन्हा व श्रीमती नूतन सिन्हा ने अपने अध्ययन में लोहरदगा से प्राप्त स्टोन सर्कल का उल्लेख किया है। सर्वेक्षण के दौरान मैने नगड़ी गॉव (रॉची जिला) में मुंडा जनजाति के एक स्टोन सर्कल का अवलोकन किया। (चित्र संख्या–4.7)।

एक ही महापाषाणिक स्थल से प्राप्त सामूहिक मेनिहिर की ऊॅचाई में विविधता पाई जाती है। बालो (खूँटी जिला, झारखण्ड) से प्राप्त 22 मेनिहिर के समूह, सड़क के दोनों ओर से पाये गये है। (चित्र संख्या–4.8)।

इन सभी मेनिहिर की ऊॅचाई अलग–अलग है। एक मेनिहिर की ऊॅचाई '3 फीट' की है। तो उसी के समीप दूसरे मेनिहिर की ऊॅचाई '3 मीटर' के आस–पास है। कुछ मेनिहिर की ऊॅचाई 2 मीटर तक भी है। इसके पीछे वास्तविक कारण क्या हो सकते है, यह प्रश्न अत्यन्त रोचक हैं। मेनिहिर की ऊॅचाई में अंतर का संबंध मृतक के आयु के अंतर होने से है या मृतक के सामाजिक स्थिति के अंतर होने से मेनिहिर पत्थरों में अंतर पाया जाता है। या तत्कालीन समय में जो पत्थर आसानी व सहजता से प्राप्त हो पायें इस कारण मेनिहिर में अंतर पाया जाता है। ये सभी संकल्पना केवल एकपक्षीय है और इस संदर्भ में कुछ भी ठीक–ठीक जानकारी नहीं है कि एक महापाषाण स्थल के 22 मेनिहिर की ऊॅचाई में अंतर के पीछे मिथक या वास्तविकता क्या है। इस संदर्भ में

ग्रामीण की जागरूकता सीमित है। चूंकि यह मेनिहिर अत्यन्त पुराने है, वस्तुतः इस संदर्भ में ग्रामीण को इसके पीछे निहित मिथक व वास्तविकता के संदर्भ में स्पष्ट व निश्चित जानकारी नहीं है। यद्यपि बालों गॉव के ही एक ग्रामीण के अनुसार ये मेनिहिर महापाषाण मृतक पाहनों (मुंडारी पुरोहित) से संबंधित है, जिसे वर्ष में दीरी–कापी नाम त्योंहार में पूजा की जाती है।

एक ही महापाषाणिक स्थल से प्राप्त विभिन्न डोलमेनों, विभिन्न क्षैतिज स्लैबो विभिन्न मेनिहिरो के आकार व ऊॅचाई में तकनीकि अंतर का कारण स्थानीय स्थल से सहजता से प्राप्त पत्थरों के विभिन्न आकार व ऊॅचाई के कारण है या इसके मूल में कोई मिथकीय अवधारणा विद्यमान है? यह प्रश्न अत्यन्त विचारणीय हैं।

महापाषाण स्थल का क्षेत्र गॉव की जनसंख्या या खूॅटकटी से निर्धारित होता है। महापाषाण स्थल प्रायः गॉव के सबसे सीमांत क्षेत्र, अन–उपजाऊ भूमि, किसी पेड़ के निकट या ऊॅचे भूमि स्थल पर या किसी नदी के किनारे या पहाड़ी के नजदीक क्षेत्र जहॉ सरलता से पत्थर प्राप्त हो सके, या गॉव के कृषि अनुपयुक्त खुले मैदान में महापाषाण कब्र के तौर पर प्रयोग किया जाता है।

एक ही महापाषाण स्थल के महापाषाणिक पत्थरों में विविधता पायी जाती है। जैसे एक महापाषाणिक स्थल में क्षैतिज स्लैब, डोलमेन, बीरीदीरी (मेनिहिर) इत्यादि प्रकार के महापाषाणिक पत्थरों के प्रमाण मिलते हैं। इन पत्थरों के तकनीकी व ज्योतिष आकार में भी भिन्नता पायी जाती है। एक ही महापाषाणिक स्थलों से प्राचीन प्रकार के महापाषाण और जीवंत परंपरा का हिस्सा नवीन महापाषाणिक दोनों प्रकार के पत्थरों के प्रमाण मिलते हैं। इन पत्थरों के तकनीकि व कुछ महापाषाणिक स्थलों पर केवल पाहनों (पुरोहित) से संबंधित महापाषाणिक पत्थर मिलते है। (चित्र संख्या–4.9)।

गैर–शवाधान पद्धति से संबंध महापाषाण पत्थरों के प्रमाण मिलते है, जिनका प्रयोग केवल स्मृति व अन्य उद्देश्यों के लिए महापाषाण पत्थरों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के स्मृति–पत्थरों (गैर–शवाधान से संबंधित) का प्रयोग होता है, बहुत

समय के पश्चात् घर में लड़की का जन्म हुआ हो, सीमा निर्धारित करने के लिए, कई पत्थरों पर देवनागरी लिपि में सर्वोच्च न्यायालय के आदेश भी लिखे गये है ताकि जनजाति समुदाय जागरूक हो एवं उनके अधिकारों का अतिक्रमण न हो। इसके अतिरिक्त रॉची व खूँटी जिले में कृषि संबंधी भूमि क्षेत्र में एकाश्म पत्थरों के प्रमाण मिलते है, जिसका संबंध संभवतः गैर–शवाधान परंपरा से ही है कारण कि ज्यादातर शवाधान परंपरा महापाषाणिक स्थल गैर–कृषि संबंधी भूमि या अन–उपजाऊँ भूमि से संबंधित होते है। गैर–शवाधान पद्धति से संबंधित महापाषाण पत्थरों में मेनिहिर प्रकार के पत्थर अधिक प्राप्त होते है, तथापि बुरूडीह (तमाड़, प्रखंड, रॉची जिला) से तीन डोलमेन प्रकार के महापाषाणिक पत्थरों का अवलोकन किया। जिसका संबंध संभवतः गैर–शवाधान पद्धति से ही हैं।

पारंपरिक हड़गड़ी अनुष्ठान–

एम0 टोपनो ने अपने लेख फ्युनरल् राइट्स ऑफ द मुंडास ऑन द रॉची प्लेट्यु में द्वितीयक शवाधान से संबंधित हड़गड़ी अनुष्ठान का स–विस्तार वर्णन किया हैं। यद्यपि एम0 टोपनो (1955) ने तत्कालीन समय में मुंडा जनजाति द्वारा शव के दफनायें जाने व इससे संबंधित अनुष्ठान व कर्मकांडों का वर्णन किया है तथापि प्राथमिक शवधान परंपरा में महापाषाण पत्थरों को किस प्रकार स्थापित कया जाता है, इसकी जानकारी स्पष्ट नहीं की है।

इस परंपरा के अंतर्गत एक ही वंश से संबंधित (खूँटकटी) लोगों का हड़गड़ी अनुष्ठान संपादित किया जाता हैं। गॉव की लड़की का विवाह होने के पश्चात् जब वह प्राकृतिक रूप से मृत्यु को प्राप्त होती है, तो उसका हड़गड़ी अनुष्ठान उसके पैतृक निवास स्थान में ही सम्पन्न में ही सम्पन्न किया जाता है।

पांरपरिक हड़गड़ी अनुष्ठान के गॉववासियों को सामूहिक भोज का निमंत्रण दिया जाता है, जिसमें मुर्गे या बकरे का मांस भी भोज में शामिल किया जाता है। 1955 के दौर में भी पारंपरिक हड़गड़ी अनुष्ठान संपादित करने वित्तीय खर्च अधिक होता था

(एम0 टोपनो, 1955)। गॉव के आर्थिक के हिसाब से हड़गड़ी अनुष्ठाानिक परंपरा व सामूहिक भोज का आयोजन करते हैं। (एम0 टोपनो, 1955)

चोकाहातू (रॉची जिला) महापाषाणिक स्थल से संबंधित पाहन 'सुधिर पातर' ने बात–चीत में बताया कि 'हड़गड़ी अनुष्ठान 'दसकर्म' अर्थात् दस दिन तक चलने वाले शोक–अनुष्ठान के बाद ही हड़गड़ी परंपरा संपादित की जाती है। हड़गड़ी के 1–2 दिन पूर्व 'उम्बूल अडेर' कार्यक्रम किया जाता है, इस परंपरा में मृतक व्यक्ति के आत्मा को वापस घर बुलाया जाता है। इस परंपरा की जानकारी (एम0 टोपनो0 1955) द्वारा विशेष रूप से दी गई है। इस परंपरा में घर के पुरूष सदस्यों द्वारा गॉव के सबसे सुदूर क्षेत्र में एक अल्पकालीन कुन्बा (झोपड़ी) बनाया जाता है। तत्पश्चात् कुन्बा (झोपड़ी) को जलाकर मृतक को उसके नाम लेकर तीन बार पुकारा जाता है। इसके बाद मिथक धारणा के अनुसार वे मृतक व्यक्ति को अपने घर ले आते है। घर में जलते हुए दीपक के सामने यह परीक्षण किया जाता है कि मृतक की आत्मा उनके साथ घर आयी हैं या नहीं यदि आयी है तो किस व्यक्ति के साथ आयी है। यह एक दिलचस्प अनुष्ठान है, जिसके संदर्भ में नगड़ी के ग्रामवासी भोलामुंडा ने विस्तार से बताया।

हड़गड़ी अनुष्ठान के दिन पाहन (पुरोहित) के दिशा–निर्देशन में महापाषाणिक कार्यक्रम सम्पन्न किया जाता है। सर्वप्रथम काले बकरे की बलि, मृतक के सम्मान में दी जाती है। उसके खून को एक कटोरे में रखा जाता है। विधिवत तरीके से चुकिया व उसमें रखे मृतक की अस्थि (शेष अस्थि) को दफनाकर स्मृति स्वरूप महापाषाण पत्थर को गाड़ने की परंपरा है। पत्थर को पानी से सर्वप्रथम धोया जाता है, इसे हल्दी व सरसो तेल का लेप लगाकर महापाषाण पत्थर को मृतक के नाम पर स्थापित किया जाता है। इसके पश्चात् सामूहिक भोज का आयोजन किया जाता है। पारंपरिक हड़गड़ी अनुष्ठान गॉव–गॉव में अपने–अपने सहूलियत के हिसाब से परंपरा में संशोधित करते रहे है। वस्तुतः इस पारंपरा अनुष्ठान के संस्कृति गॉव दर गॉव विविधता पायी जाती है।

छोटानागपुर की महापाषाण परंपरा में अन्य धर्मों का प्रभाव भी स्पष्ट परिलक्षित होता है। छोटानागपुर की जनजातियॉ अपने मूल धर्म सरना के अतिरिक्त हिन्दू रीति–रिवाजों व ईसाई अनुष्ठानों का अनुसरण अपने अंतेष्ठि परंपरा में करती है। मुंडा जनजाति व उरॉव जनजाति जो ईसाई धर्म को अपनाया है, वे ईसाई अंतेष्ठि संस्कार संबंधी विधानों को अनुसरण करती है। द्वितीयक शवधान पद्धति से लेकर हड़गड़ी संपादित कर तक कई रीति–रिवाजों में हिन्दू धर्म का प्रभाव परिलक्षित होता है।

चित्र संख्या–1 अप्राकृतिक मृत्यु से जुड़े महापाषाणिक समाधि, किताहातू (खूँटी जिला)

चित्र संख्या–2 उरॉव जनजातियों की क्षैतिज महापाषाणिक समाधि (अप्राकृतिक मृत्यु से सम्बन्धित)

चित्र संख्या–3 महापाषाणिक समाधियों में कपमार्क्स के प्रमाण, स्थान– बालो, नापो एवं चोकाहातू

चित्र संख्या–4.1 डोलमेन प्रकार के महापाषाणिक पत्थर, तमाड़ (रॉची जिला)

चित्र संख्या–4.2 क्षैतिज स्लैब प्रकार के महापाषाणिक समाधि, तेतला, तमाड़ एवं चोकाहोतू (रॉची जिला)

चित्र संख्या–4.3 मेनिहिर (बीरीदीरी) प्रकार के महापाषाणिक समाधि, बलुआडीह, हहुआ एवं पंकरी बरवाडीह

चित्र संख्या–4.4 सामूहिक मेनिहिर प्रकार के महापाषाणिक समाधि, कामरा एवं बालो, (खूँटी जिला)

चित्र संख्या–4.5 मेनिहिर के साथ क्षैतिज स्लैब, प्रकार के महापाषाणिक समाधि, तमाड़

चित्र संख्या–4.6 मेनिहिर के साथ डोलमेन प्रकार के महापाषाणिक समाधि, खूँटी जिला

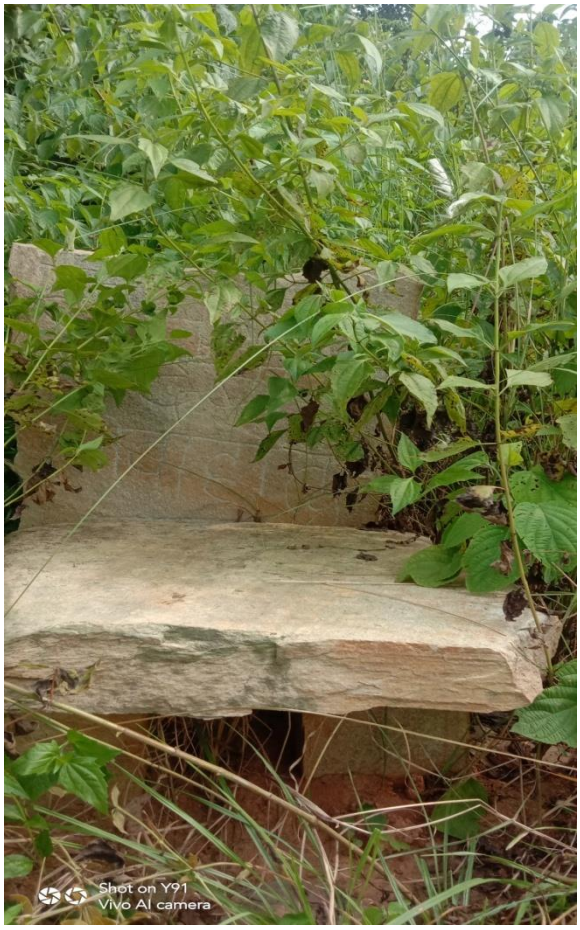

चित्र संख्या–4.7 स्टोन सर्कल प्रकार के महापाषाणिक समाधि, नगड़ी, रॉची जिला

चित्र संख्या–4.8 22 सामूहिक मेनिहिर सड़क के दोनों ओर व पाहन से संबंधित प्रकार के महापाषाणिक समाधि, बालो, खूँटी जिला।

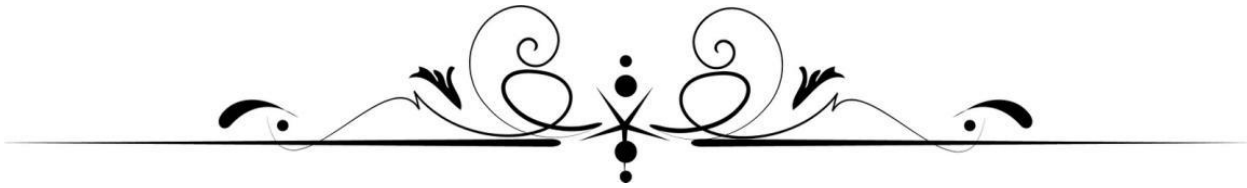

अध्याय–पंचम

उपसंहार

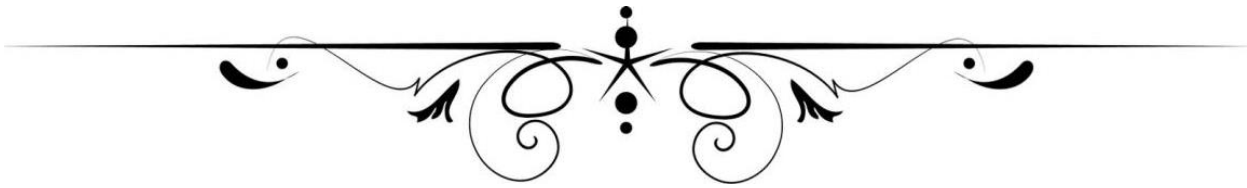

अध्याय–पंचम

उपसंहार

महापाषाणिक संस्कृति का सम्बन्ध दफनाने की शैली से है। शवाधान विधि व बड़े–बड़े पाषाण का साथ–साथ प्रयोग 'महापाषाणिक संस्कृति' की भौतिक प्रकृति का परिचायक हैं। सभी महापाषाणिक समाधियों में पत्थर प्रयोग के प्रमाण नहीं मिलते है। उदाहरण के तौर अस्थि–कलश एवं पैर वाला या बिना पैरों वाला सार्गोफेगी। तथापि वी0 सेल्वाकुमार (2004) ने मत प्रस्तुत किया कि ''कुछ उदाहरणों में अस्थि–कलश एवं सार्गोफेगी प्रकार के शवाधान पद्धति में पत्थरों के होने के प्रमाण मिलते है'' सेल्वाकुमार (2004)

लौह युग से पूर्व नवपाषाण काल, हड़प्पा काल, उत्तर हड़प्पा काल और ताम्रपाषाण काल में भी 'अस्थि–कलश' एवं 'गर्त–शवाधान' का प्रयोग शवाधान पद्धति के लिए किया जाता था। वैसे सभी महापाषाण का संबंध केवल शवाधान पद्धति से था, ऐसा मानना अतिश्योक्ति है। कई प्रकार के महापाषाणों जैसे डोलमेन, मेनिहिर व सामूहिक मेनिहिर प्रकार के महापाषाणिक पत्थरों को गैर–शवाधान पद्धति व अन्य स्मरणीय प्रयोजन के लिए प्रयोग किये जाने के साक्ष्य मिलते हैं। पूरे भारत से हमें दो प्रकार के महापाषाणिक संस्कृति के प्रमाण प्राप्त होते है। हेमनड्रॉफ (1945) के अनुसार ''महापाषाण संस्कृति दो विविध प्रकार के परंपरा का प्रतिनिधित्व करती है। प्रथम का संबंध दक्षिण भारत के 'अतीत–परंपरा' से है। दूसरे का संबंध पूर्वी भारत, मध्य भारत एवं उत्तरी–पूर्वी भारत में निरंतर अभ्यास की जाने वाली महापाषाणिक समाधियों की 'जीवंत–परंपरा' के तौर पर जीवित हैं'' हेमनड्रॉफ (1945)।

छोटानागपुर की महापाषाणिक समाधि–संस्कृति भी जीवंत–परंपरा का सजीव उदाहरण हैं। हालांकि अन्य महापाषणिक स्थलों (जैसे–दक्षिण भारत, प्रायद्वीपीय भारत, विंध्य एवं उत्तर–पूर्वी भारत) की भॉति छोटानागपुर की महापाषाणिक संस्कृति अत्यंत

प्राचीन और समृद्ध होने के बावजूद छोटानागपुर की महापाषाणिक समाधियों का अत्यन्त सीमित अध्ययन संभव हो पाया हैं। छोटानागपुर की महापाषाणिक समाधि परंपरा आज भी मुंडा जनजाति, हो जनजाति तथा उरॉव जनजाति के बीच प्रचलित है।

शोध क्षेत्र पूरे छोटानागपुर क्षेत्र से संबंधित न होकर केवल झारखंड के उन क्षेत्रों तक सीमित है, जहॉ से महापाषाणिक समाधियों के प्रमाण मिलते है। कोडरमा, हजारीबाग, चतरा, रामगढ़, लोहरदग्गा, रॉची, खूँटी, सिंहभूम क्षेत्र इत्यादि महापाषाणिक समाधियों से जुड़े महत्वपूर्ण स्थल है। ध्यान देने योग्य तथ्य है कि झारखण्ड प्रदेश के सभी जिलों का संबंध न तो महापाषाणिक समाधियों से है और न ही झारखण्ड प्रदेश से संबंध रखने वाले जनजातियों समूह (कुल–32, प्रकार की जनजातियॉ) द्वारा महापाषाणिक परंपरा का अभ्यास किया जाता है।

छोटानागपुर के महापाषाणिक समाधियों की प्रकृति ''द्वितीयक शवाधान पद्धति'' पर आधारित है, तथापि खूँटी जिला व असुर जनजाति द्वारा ''प्राथमिक शवाधान'' के प्रयोग के भी प्रमाण मिलते है (हिमांशु शेखर, 2014)। एम0टोप्पनो (1955) ने भी रॉची पठार के मुंडाओं में प्रचलित प्राथमिक शवाधान पद्धति एवं द्वितीयक शवाधान पद्धति का उल्लेख किया है।

मुंडा जनजाति, हो जनजाति व असुर जनजाति का संबंध आस्ट्रो–ऐशियाटिक भाषाई परिवार से है, वही उरॉव का संबंध द्रविड भाषा परिवार से है। महापाषाण की भौतिक बनावट एवं संरचना सभी जनजातियों में एक जैसे है किन्तु महापाषाणिक पत्थरों के गाड़ने के पूर्व अंतेष्ठि अनुष्ठान–परंपरा एवं सामाजिक संस्कृति में व्यापक भिन्नता दिखाई पड़ती हैं। साथ ही प्रखंड–दर–प्रखंड एक ही जनजाति के महापाषाणिक अनुष्ठान परंपरा में भी विविधता दिखाई पड़ती है।

वस्तुतः यह विविधता उस स्वतंत्र पारंपरिक संस्कृति का परिचायक जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी, पूर्वजों से जीवित जनजातियॉ समाज तक क्रमशः हस्तान्तरित हुई है।

इसके अतिरिक्त भौगोलिक विविधता एवं सामाजिक–आर्थिक असमानता भी एक महत्वपूर्ण कारक है जिससे महापाषाणिक संस्कृति में विविधता दिखाई पड़ती है।

छोटानागपुर की महापाषाणिक परंपरा को शवाधान पद्धति के आधार पर, गैर शवाधान पद्धति के आधार पर तथा महापाषाणिक समाधियों के भौतिक संरचना के आधार पर पृथक–पृथक वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है। छोटानागपुर की महापाषाणिक समाधियों के भौतिक संरचना में डोलमेन, क्षैतिज पत्थर, मेनिहिर, केयर्नवृत, मेनिहिर सहित क्षैतिज पत्थर, मेनिहिर सहित डोलमेन पत्थर एवं सामूहिक मेनिहिर इत्यादि प्रकार के महापाषाणिक समाधियॉ प्राप्त होते है। आम तौर पर एक ही महापाषाणिक समाधि स्थलों से डोलमेन, मेनिहिर, क्षैतिज पत्थर, मेनिहिर सहित डोलमेन एवं मेनिहिर सहित क्षैतिज प्रकार के पत्थरों के प्रमाण मिलते है। गोंडवाना पत्थर, ग्रेनाइट पत्थर, बलुआ पत्थर एवं अन्य स्थानीय पत्थरों का प्रयोग महापाषाणिक समाधि अनुष्ठान के लिए किया जाता था। महापाषाणिक स्थलों के समाधियों पर कपमार्क्स का मिलना अत्यन्त सामान्य वस्तुस्थिति है। किन्तु इसके पीछे निहित अवधारणा के मूल कारणों की स्पष्टतः कोई सटीक जानकारी नही है। समाधि की लम्बाई, मृतक के उम्र, वंश, लिंग व सामाजिक हैसियत के हिसाब से निर्धारित होता है। सामूहिक मेनिहिर सम संख्या या विषम संख्या हो सकती है। इसी कोई निश्चित संख्या तय नही है। नवीन के प्रकार के महापाषाणिक पत्थरों पर देवनागरी लिपि में मृत व्यक्ति के जन्म दिन एवं मृत्यु दिवस का उल्लेख प्राप्त होता है। इससे हमें यह भी ज्ञात होता है कि महापाषाणिक समाधियें को किस उद्देश्य के लिए स्थापित किया गया था।

छोटानागपुर के जनजातियों में विशेषकर मुंडा जनजातियों में महापाषाणिक समाधियों को स्थापित करने की परंपरा को हड़गड़ी, पत्थरगड़ी या हरसली इत्यादि नामों से जाना जाता है। 'जंग–टोप्पा' उत्सव के दिन 'हड़गड़ी' स्थापित करने की परंपरा का अनुपालन किया जाता है। मुंडाओं का एक पारंपरिक हड़गड़ी स्थल होता है, जो गॉव के सबसे किनारे (आवास–बस्ती से दूर) गैर कृषिक वाले क्षेत्र या पहाड़ियों व नदियों के समीप स्थित होता है। खूँटकटी (एक वंश समूह के लोग) के अनुसार

मुंडाओं के अलग–अलग किली (गोत्र) का पृथक–पृथक हड़गड़ी स्थल होता है। हो जनजाति अपने ही घर के समीप महापाषाणिक समाधियों को स्थापित करते है ताकि वे अपने पूर्वजों से अविच्छिन रूप से जुड़े रहे। द्रवीड़ होने के बावजूद उरॉव की महापाषाणिक संस्कृति व समाधि मुंडाओं के महापाषाणिक समाधियों के अत्यन्त समान है। इनका भी महापाषाणिक स्थल गैर–आवासीय स्थलों से संबंधित होता है।

अकास्मिक मृत्यु (आग लग जाने के कारण मृत्यु, सॉप के डॅसने से मृत्यु, नकस्ली हमले से मृत्यु, चेचक या टीवी जैसे बीमारी से मृत्यु) होने पर इनके लिए पारंपरिक महापाषाणिक स्थल में कोई स्थान नही होता है। स्मरण के तौर पर प्रायः सड़क के किनारे इनके लिए हड़गड़ी स्थापित किया जाता है। प्राकृतिक रूप से मृत पूर्वजों के समाधियों की भॉति इन हड़गड़ी समाधियों की वार्षिक पूजा की नहीं जाती है। जीवित–महापाषाणिक परंपरा में मुंडा जनजातियों द्वारा जनवरी–फरवरी माह में– **'दीरीकापी'** पर्व मनाये जाने की प्रथा है। जिसका उद्देश्य अपने पूर्वजों के लिए शांति की प्रार्थना करना तथा आशीर्वाद के तौर पर अच्छी फसल, अच्छा स्वास्थ्य व समृद्धि प्राप्त करना है।

महापाषाणिक संस्कृति का एक अन्य तत्व गैर शवाधान पद्धति से भी जुड़ा हुआ है। गैर–शवाधान पद्धति में सम्मिलित महापाषाणिक पत्थर स्मरणीय एवं अन्य प्रयोजनीय कार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया था। सीमा चिन्हित करने के लिए, (सीसनदीरी), अच्छे फसल प्राप्त करने के लिए, उत्सवों में बलि देने के लिए, न्यायिक फैसले में जाने से पूर्व विजय सुनिश्चित करने के लिए, सामाजिक वर्चस्वता को कायम रखने के लिए, किसी संघर्ष में विजयी होने के स्थिति में तथा किसी घरेलू पशु के मर जाने के शोक के लिए भी गैर–शवाधान महापाषाणिक प्रयोग को स्थापित करने की परंपरा का अनुपालन किया जाता है।

झारखण्ड से प्राचीन महापाषाणिक समाधियों के आरम्भिक कालानुक्रम के प्रमाण उत्तर–लौह युग से प्राप्त होते है। 1965 में 'खूँटी–टोली' नामक महापाषाणिक स्थल

का उत्खनन कार्य भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग द्वारा रायबहादुर शरत–चंद्र रॉय के नेतृत्व में संपादित किया गया था। खूँटी टोली में लोहे निर्माण का कार्य होता था स्वामी, (1996)। छोटानागपुर के महापाषाणिक कब्र से पूरे नरकंकाल के प्रमाण नहीं मिलते है। प्रायः यहॉ की शवाधान परंपरा द्वितीयक शवाधान पद्धति को समर्पित है। दफनाने के लिए अस्थि अवशेष को कपड़े में लपेट कर चुकिया (कलश) में रखा जाता है, तत्पश्चात् जिस कब्र में अस्थि–कलश समर्पित किया गया होता है, स्मृति स्वरूप वहॉ एक पाषाण स्थापित कर दिया जाता है। चुकिया प्रायः साधारण प्रकार की ही होते है। कब्र के भीतर दफनाये गये 'चुकिया' में कोई भी भित्ती चित्र के प्रमाण प्राप्त नही हुए है। हहुआ एवं रॉची के बरूडीह नामक महापाषाणिक स्थलों से वर्षा में मिट्टी क्षरण के कारण आश्चर्य रूप से अस्थि–कलश के कब्र से ऊपर आने के प्रमाण मिलते हैं। भौतिक अवशेषों का बाहर आना यह दर्शाता है कि यहॉ के महापाषाणिक परंपरा को संरक्षण की आवश्यकता है।

छोटानागपुर की महापाषाणिक समाधियों से जुड़ी सबसे महत्वपूर्ण समस्या है कि यहॉ की महापाषाणिक समाधियों में व्यवस्थित उत्खनन कार्य के अभाव से यहॉ की भौतिक संस्कृति पर विशेष प्रकाश डालने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। महापाषाणिक समाधियों की भौतिक संरचना इसके बाहय भौतिक संस्कृति को उजागर तो करती है किन्तु कब्रों के उत्खनन के अभाव से कब्र के भीतर के निहित भौतिक अवशेषों के माध्यम इस जनजातियों के वंश परंपरा, विस्थापन प्रकृति, नृजातीय विशेषता, प्रयोग किये जाने वाले औजार, इनकी संघर्षवादी प्रकृति तथा छोटानागपुर के अतीत महापाषाणिक संस्कृति संदर्भ में अत्यन्त सीमित जानकारी प्राप्त होता है तथा प्राचीनतम कालानुक्रम का पुरातात्विक अध्ययन अतिअल्प संभव हो सका है। इसके विपरीत कुछ महापाषाणिक स्थलों से कुछ भौतिक अवशेष के कब्र से ऊपर आने के कारण भी इन भौतिक अवशेषों को संरक्षण के अभाव में विनष्टता का सामना करना पड़ा है।

इसके अतिरिक्त महापाषणिकों पत्थरों को भी विनष्टता का सामना करना पड़ा है। सर्वेक्षण कार्य के दौरान (मर्चाडीह सोनाहातू प्रखंड रॉची) से बालू खनन कार्य से महापाषाणिक समाधियों को नुकसान पहुॅचा है। इस प्रकार पंकरी बरवाडीह, नापो, बलुआडीह इत्यादि महापाषाणिक समाधियों को केवल समाधि पत्थर के आधार पर कालानुक्रम का केवल अनुमान लगाया जा सकता है। इसके भौतिक संस्कृति पर न तो कोई दस्तावेज है, न तो ग्रामवासियों को स्पष्ट जानकारी है। छोटानागपुर महापाषाणिक कब्रगाहों की खुदाई पुरातात्विक विधि से अत्यधिक न्यूनस्तर पर हुई है। 1960 के दशक में पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग द्वारा रॉची के खूॅटीटोली नामक महापाषाणिक स्थलों के उत्खनन कार्य संपादित किये जाने के प्रमाण मिलते हैं। उत्खनन के अभाव के कारण कब्रगाह के भीतर न तो दफनाने की विधि की विविधता का स्पष्ट पता चल पाता है न ही कब्रगाह के भीतर किन–किन धातुओं का प्रयोग हुआ, यह तक नही स्पष्टतः पता चल पाता है। कब्रगाह के भीतर तत्कालीन समय में जिन धातुओं का प्रयोग हुआ, उनके धातु विज्ञान (शुद्ध धातु या मिश्रित धातु) व भौतिक संस्कृति का यथावत् जानकारी प्राप्त करने में अत्यन्त असुविधा हुई हैं।

प्रत्येक खूॅटकटी की पृथक महापाषाणिक समाधियॉ प्रत्येक उन विस्थापित जनजाति समुदाय को अपने मूल निवास से एकीकृत करता है, जो रोजगार एवं अन्य उद्देश्यों के लिए शहर की ओर विस्थापित हुए किन्तु उनका मृत्यु संस्कार उनके ही खूॅटकटी में संपादित किया जाता है। रॉची शहर (मोहराबादी) में महापाषाणिक परंपरा का प्रमाण प्राप्त होना इस मत को सुदृढ़ता प्रदान करता है कि शहरीकरण की ओर उनका रूझान तो बढ़ा है, लेकिन इस कारण ये जनजाति समुदाय मौलिक परंपरा को अभ्यास करने में असहज नही हैं।

वैसे उरॉव जनजाति के द्वारा ईसाई धर्म को अपनाये जाने से उनके अंतेष्ठि कर्मकांड में ईसाई धर्म के प्रभाव को देखा जा सकता है। मुंडा जनजातियों द्वारा भी जिस अंतेष्ठि अनुष्ठानिक संस्कृति का अनुसरण करती है, वह हिन्दू धर्म से अधिक प्रेरित होने के प्रमाण मिलते है। उदाहरण के लिए मृतक को हिन्दू धर्म की भॉति अर्थी

देना, तीसरे दिन विशेष शोक मनाना, दसवें दिन नाई को बुलाकर मुंडन कार्यक्रम (सिर के केस छिलवाना) को संपादित करना हिन्दू धर्म के विशिष्ट प्रभाव को दर्शाता है। कई मुंडा जनजातियों भी ईसाई धर्म को अभ्यास करने के कारण इनके अतेष्ठि संस्कार ईसाई धर्म का प्रभाव निश्चित रूप से पड़ा हैं।

दक्षिण भारत की महापाषाणिक संस्कृति की भॉति छोटानागपुर के महापाषाणिक समाधियों के कब्रगाहों में चेम्बर का प्रयोग नही मिलता हैं। पोर्टहॉल, मानव रूपी पत्थर, पैरो वाला सार्गोफेगी भी छोटानागपुर के महापाषाणिक परंपरा का भाग नही हैं। दक्षिण भारत के महापाषाणिक समाधियों की विविधताओं के समान भी छोटानागपुर क्षेत्र विशेषकर झारखंड के महापाषाणिक समाधियों के भौतिक संरचना में सीमित विविधता प्राप्त होती है। बड़े अस्थि–कलश एवं उन पर भित्ती चित्र के भी अल्प प्रमाण मिलते है।

आस्ट्रो–ऐशियाटिक परिवार से होने के कारण मुंडा एवं हो की महापाषाणिक परंपरा उत्तर–पूर्व भारत के खासी एवं जयंतियॉ जनजाति के महापाषाणिक समाधियों में पत्थर संरचना अत्यन्त समाचीन प्रतीत हेाती है। किन्तु खासी एवं जयंतिया जनजाति तथा मुंडा एवं हो जनजाति की सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि व धार्मिक परंपरा में व्यापक अंतर दृष्टिगोचर होता हैं। खासी एवं जयंतिया जनजाति समुदाय के अंतेष्ठि अनुष्ठान में मातृसत्तात्मक व्यवस्था का प्रभाव अधिक दिखाई पड़ता है वही मुंडा एवं हो जनजाति में पितृसत्तात्मक समाज का अंतेष्ठि संस्कार में प्रभाव अधिक देखा जा सकता है। द्रविड़ भाषाई समूह से संबंधित होने के उरॉव जनजाति की महापाषाणिक संस्कृति, मुंडा एवं हो जनजाति के महापाषाणिक संस्कृति से व्यापक रूप से प्रभावित हैं।

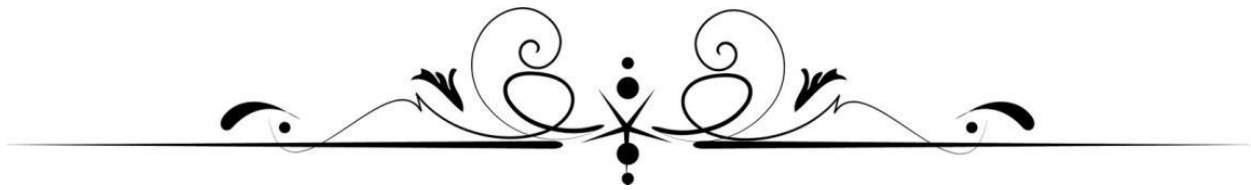

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

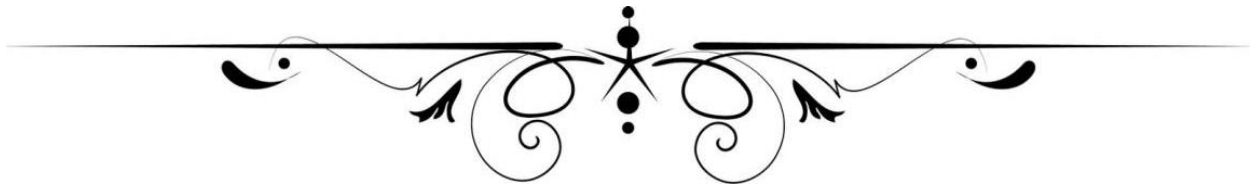

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- इंडियन आर्कायोलॉजी 1965–66 अ रिव्यू पेज संख्या– 10 एवं 11
- इंडियन आर्कायोलॉजी 1987–88, अ रिव्यू, पेज संख्या– 12 एवं 13
- इंडियन आर्कायोलॉजी 1992–93, अ रिव्यू, पेज संख्या– 5
- इंडियन आर्कायोलॉजी 1994–95, अ रिव्यू, पेज संख्या– 3
- इंडियन आर्कायोलॉजी 2012–13, अ रिव्यू, पेज संख्या– 61
- घोष, ए0एन0 ''इन साइक्लोपीडिया, ऑफ आर्कायोलॉजी; नई दिल्ली, 1990।
- शर्मा, जी0आर0, ''मेगालिथिक कल्चर ऑफ द नादर्न विंध्य, इन रिसेंट एडवांस इन इंडोपोसिफिक प्रिहिस्ट्री, नई दिल्ली, 1985, पेज–477–88।
- शेखर, एच0 एंड पी0पी0 जोग्लेकर, ''मेगालिथिक मान्यूमेंट ऑफ हो ट्राइब्स ऑफ वेस्ट सिंहभूम डिस्ट्रिक'', बुलेटिन ऑफ द डेक्कन कॉलेज पोस्ट–ग्रेजुएट एंड रिसच इंस्टीट्यूट, वाल्यूम, 77, 2017, पेज–65–74।
- शेखर, एच0 एंड पी0पी0 जोग्लेकर, ''रिसेंट एक्सप्लोरेशन इन रॉची एंड खूँटी डिस्ट्रिक'' झारखण्ड, हेरिटेज : जर्नल ऑफ मल्टीडिस्पल्निरी स्टडीज इन आर्कायोलॉजी, 2016 : 261–278।
- शेखर, एच0 एंड पी0पी0 जोग्लेकर, पी0पी0 प्रिलिमनरी ऑफ द एक्पोलारेशन इन रॉची एवं खूँटी डिस्ट्रिक, झारखण्ड, हेरिटेज : जर्नल ऑफ मल्टीडिस्पलनरी स्टडीज इन आर्कायोलॉजी, 2015।
- शेखर, एच0 एंड पी0पी0 जोग्लेकर, अ स्टडी ऑफ मेगालिथ मॉन्यूमेट्स इन मुरहू ब्लॉक ऑफ खूँटी डिस्ट्रिक झारखण्ड, इंडिया जर्नल ऑफ आर्कायोलॉजी, 2019।
- शेखर, एच0, के0ए0 पवार, के0 योंग्जुन, लिविंग मेगालिथ ट्रेडिशन अमंग द मुंडा कम्यूनिटी ऑफ झारखण्ड, हेरिटेज, जर्नल ऑफ मल्टी डिस्पलनरी स्टडीज इन आकायोलॉजी, 2014।

- झॉ, डॉ0 जगदीश चन्द्र, 1933 ''द कोल इंसुरेक्सन ऑफ छोटानागपुर'', ठाकरे, स्पींक एंड कॉरपोरेशन प्रा0लि0, 1933।
- इकॉनामिक सर्वे ऑफ झारखण्ड, डिपार्टमेन्ट ऑफ फाइनेंस गवर्नमेंट ऑफ झाारखण्ड, 2014।
- इल्वीन, वी0, ''द ट्राइवल आर्ट ऑफ मीडिल इंडिया, अश्नों प्रेस, न्यूयार्क, 1980।
- बॉल,वी0, ''स्टोन मोन्यूमेन्ट इन द डिस्ट्रिक ऑफ सिंहभूम– छोटानागपुर, इण्डियन एंटीक्वारी, 1872।
- बुलु, इमाम, एंटिक्वेरियन रिमेंस इन झारखण्ड, नई दिल्ली, 2015।
- बैनिंग ई0बी0 बेनिंग, ''द आकयोलॉजिस्टस् लेबॉरेटॉरी,'' द एनाल्सीस ऑफ आर्कयोलॉजी डाटा, क्लुवर अकादमी पब्लिशर, न्यूयार्क, 2002।
- ब्रेडले–ब्रिट, एफ0बी0, ''छोटानागपरु'' अ लिटिल–नॉन प्रोविन्स द इम्पायर, राइट. द अर्ली ऑफ नार्थ बुक, जी0सी0 एस0आई0, लंदन, 1903।
- बनर्जी, एन0आर0 और राजन, के0वी0 सुंदर, ''सन्नूर 1950 और 1952 : अ मेगालिथिक साईट इन डिस्ट्रिक पेट'' एंशियट इंडिया, वैल्यूम–15, 1959।
- बनर्जी, एन0आर0, ''द मेगालिथिक प्राब्लम ऑफ चिगेंलपेट'', एंशियट इंडिया, वैल्यूम–12, 1956।
- बनर्जी, एन0आर0, ''द आर्यन एज इन इण्डिया'' दिल्ली, 1965।
- कृष्णास्वामी, वी0डी0, ''मेगालिथ टाइपोलॉजी ऑफ साउथ इंडिया'' एंशियंट इंडिया, वैल्यूम–5, 1949।
- कनिंघम्, जेरिमी जे0, मीडिल रेंज अप्रोच, द युनिवर्सिटी ऑफ काल्गेरी, कनाडा, 2008।
- करण, पी0पी0, ''इकनॉमिक रिजन ऑफ छोटानागपुर'' बिहार इंडिया, इकनामिक ज्योग्राफी, 1953।
- कुमार, एन0, बिहार डिस्ट्रीक गजेटियर रॉची, गवर्नमेन्ट ऑफ बिहार गजेटियर शाखा, राजस्व विभाग, पटना, 1970।

- केनेडी, के0ए0 आर0, ''द फिजिकल एंथ्रोपॉलॉजी ऑफ द मेगालिथिक–ब्यूलिडर ऑफ साउथ इंडिया एंड श्रीलंका'', केनबरा, आस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी प्रेस, 1975।
- मोहंती, आर0के0 एवं वी0 सेल्वाकुमार, ''द आर्कायोलॉजी ऑफ मेगालिथ इन इंडिया, 1947–1997'', इण्डियन ऑर्कायोलॉजी इन रिट्रोस्पेट, वैल्यूम–1, 2002।
- मोहंता, बी0के0, लिविंग मेगालिथिक ट्रेडिशन ऑफ द हो ऑफ झारखण्ड एवं उड़ीसा, इन मेगालिथिक ट्रेडिशन इन इंडिया, भोपाल IGMRS और आर्यन बुक्स, नई दिल्ली, 2015।
- मॉवलॉग, सी0, '' क्लासीफिकेशन ऑफ खासी मेगालिथस : अ क्रिटिक'', प्रोसिडिंग ऑफ नार्थ इस्ट हिस्ट्री एशोसिएशन, 11वॉ सत्र, इंफाल।
- मेनन, श्री कुमार, ''एंशियंट स्टोनस रिडेल्स : मेगालिथ ऑफ द इण्डियन सबकान्टीनेंट'', मनीपाल, 2012।
- मूर्ति, यू0एस0, ''मेगालिथिक कल्चर ऑफ साउथ इंडिया सामाजिक आर्थिक परिप्रेक्ष्य, वाराणसी, 1994।
- मूर्ति, यू0एस0, ''मेगालिथस्'', अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ इंडियन स्टडीज, गुड़गॉव, हरियाणा, 2008।
- बिनफोर्ड, एल0आर0, वर्निंग एट आर्कयोलॉजी, अकाडमीक प्रेस, न्यूयार्क, 1993।
- थापर, बी0के0, ''पोरक्कलम 1948'' : एक्वेशन ऑफ अ मेगालिथिक अर्न–वरियल'', एंशियंट इंडिया, वैल्यूम–8, 1952, पेज 3–6।
- सिंह एस0के0, ''इन्साइड झारखण्ड'', नई दिल्ली : क्राउन पब्लिकेशन, 2005।
- सिंह, उपिन्दर, ''प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहास'', पियर्सन इंडिया, एजुकेशन सर्विसेज प्रा0लि0, नई दिल्ली, 2017।
- सिंह, आर0 एल0, ''इंडिया अ रिजनल ज्योग्राफी ऑफ इंडिया'', सिल्वर जुबली पब्लिकेशन, नेशनल जयोग्राफिक सोसायटी ऑफ इंडिया, वाराणसी–5, 1971।

- सिन्हा, हरेन्द्र प्रसाद एवं नूतन सिन्हा, ''मेगालिथिक कल्चर इन झारखण्ड'', सिर्जित रॉची, वाल्यूम 2, 2013।
- विरोत्तम, वी0, ''झारखंड : इतिहास संस्कृति'', बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, सप्तम् संस्करण, 2017।
- विनोदनी देवी, पी0, ''स्टडीज ऑन द मेगालिथिक रिमेंस ऑफ मणीपुर'', पी0एच0डी0 डिस्रटेशन, गुवाहाटी : गौहाटी विश्वविद्यालय, 1993।
- गियर्सन, एस0 डब्ल्यू0, ''द मारिया गोंड ऑफ बस्तर'', वान्या प्रकाशन नागपुर, रिप्रिंट लंदन, 1991।
- हेमन ड्रॉफ, सी0वी0 एफ0, ''द आफ्टर–लाइफ इन इन्डियन ट्राइवल विलिफ'', द जर्नल ऑफ द रॉयल एंथ्रोपॉलॉजी इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेट ब्रिटेन एंड आयरलैण्ड, 1952।
- हेमनड्रॉफ, सी0सी0 एफ0, ''द प्राब्लम ऑफ मेगालिथ कल्चर इन मीडिल इंडिया'', मैन एंड इन्वायरमेंट वाल्यूम 25, 1945।
- पाण्डे, जे0एन0, ''पुरातत्व विमर्श'', प्राच्य विद्या संस्थान इलाहाबाद, 2015।
- पोसेल, जी0 एल0, ''रेडियोकार्बन डेट्स फ्राम साउथ एशिया'', मैन एवं इन्वायरमेन्ट XII, 1988, 189–191।
- पाटील, डी0आर0, ''एंटी क्वेरियन रिमेंस ऑफ बिहार'', के0पी0 जयसवाल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पटना, 1963।
- पदैया, के0, ''कर्नल कोलिन मैकंजी एंड साउथ इंडियन मेगालिथस्'', डेक्कन कॉलेज एन्अुल रिपोर्ट, 1997, पेज 38–44।
- श्रीमाली, एम0, ''द एज ऑफ आयरन एंड द रिलिजियस रिवॉल्यूशन'' नई दिल्ली, 2007।
- रामचंद्रीय, के0एस0, ''अ बिबल्योंग्राफी ऑफ इण्डियन मेगालिथ'', आंध्रप्रदेश, 1971।

- रामचन्द्रन, के0एस0, ''सम आस्पेक्ट ऑफ द इकॉनोमी ऑफ द मेगालिथिक बिल्डर'', इंडियन हिस्ट्रोरिकल क्वाटरली, 1962।
- राव, के0पी0 एंड वी0 रामाब्राहमण, ''कल्ट ऑफ द डेड : एवीडेंस फ्रॉम द साउथ इंडियन मेगालिथस!'', मेगालिथिक मस्यूमेन्ट एंड कल्ट प्रैक्टिस, प्रोसिडिंग, निमोफिट रिल्सकी यूनिवर्सिटी प्रेस, 2016।
- राव, के0पी0, ''डेक्कन मेगालिथ, संदीप पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1988।
- राव, के0पी0, ''अंडरस्टैडिंग मेगालिथ प्रैक्टिस एन इथनोलॉजिकल अप्रोच'', आन्ध्रप्रदेश हिस्ट्री कांग्रेस, वाल्यूम 17, 1993।
- राव, के0पी0, ''आयरन एज कल्चर इन साउस इंडिया : तेलंगाना एंड आंध्र प्रदेश,'' आयरन एज इन साउथ एशिया, रिसर्च ग्रुप ऑफ साउस एशियन आर्कायोलॉजी, 2018।
- राजन के0, ''मेगालिथिक कल्चर इन कोमम बटूर रिजन'' पी0एच0डी0, डिस्रटेशन, मैसूर, मैसूर विश्वविद्यालय, 1986।
- राजन, के0, ''एक्सकेवेशन एट थंडीकुडी तमिलनाडु मैन एंड इन्वायरमेंट'', 2005।
- राजन, के0, ''मेगालिथिक कल्चर इन नार्म अर्काट रिजन, ''पुरातत्व, नं0 22, 1991, पेज 35।
- राओ, एम0एस0 नागराज, मधु : रिसेंट रिसर्चरस इन इंडिया आर्कायोलॉजी एंड आर्ट हिस्ट्री''।
- राओं, बी0के0 गुरूराज, ''मेगालिथिक कल्चर इन साउस इंडिया'', मैसूर, 1972।
- रॉय, एस0सी0, ''द मुडांज एंड देयर कंट्री'', एशिया पब्लिसिंग हाउस, बाम्बे, 1912।
- सुंदन, ए0 ''द अर्ली चेम्बर टॉम्बस ऑफ साउथ इंडिया, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 1975।

- सुड्क्या, जोना, ''द मेगालिथिक आमर्न एज कल्चर इन साउस इंडिया– सम जनरल रिमार्कस'', एंशियंट आर्कायोलॉजी, रिसोवीयेन्सिया, वाल्यूम–5, 2011।
- स्टेनीश, चार्ल्स, एक्सप्लेनेशन इन आर्कयोलॉजी ओवरव्यू, यूनिवर्सिटी ऑफ केलिफ्रॉनियॉ, यू0एस0ए0, 2008।
- डाल्टन, इ0टी0 एंड पीपे, टी0 एफ0, ''रूड स्टोन मोन्यूमेंट्स इन चुटियानागपुर'',
- डाल्टन, इ0टी0, डिस्क्रीप्टीव एथनोलॉजी ऑफ बंगाल ऑफिस ऑफ सुपरिअैडेन्ट ऑफ गवर्नमेन्ट प्रिटिंग, 1872।
- डाल्टन, ई0टी0, ''डिसक्रिपटिव इथनॉलॉजी ऑफ बंगाल'', ऑफिस ऑफ द सुपरिटेंडेंट ऑफ गवर्नमेन्ट प्रिटिंग प्रेस, कलकत्ता, 1872।
- उस्ताद, मथुरा राम, ''टू एक्सप्लोर द मेगालिथिक कल्चर ऑफ रॉची'', सेन्ट्रल इंडिया जर्नल ऑफ हिस्ट्रोरिकल एंड आर्कायोलॉजिकल रिसर्च, वाल्यूम, 3, 2014।
- डन, जे0ए0, ''द मिनरल डिपोजिट्स ऑफ इस्टर्न सिंहभूम एंड सराउडिंग एरिया'', मेमोरी, ज्योलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, 1940।
- दीक्षित, के0एन0, ''मेगालिथिक टाइपोलॉजी एंड क्रोनेलॉजी : अ रिस्टेटमेंट इन सम्कृति, अगमकला प्रकाशन नई दिल्ली, 1969।
- दीक्षित, के0एन0, ''पुरातत्व'' वैल्यूम 28, नई दिल्ली, 1997–98।
- दीक्षित, के0एन0, ''द ऑरिजन एंड डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ मेगालिथ इन इंडिया'', वाराणसी, 1969।
- दीक्षित, के0एन0, पुरातत्व : बुलिटेन ऑफ इंडियन आकयोलॉजीकल सोसाइटी नं0–39, नई दिल्ली, 2009।
- दास, सुभाशिष, ''सम सायलैंट फिचर्स ऑफ द सरफेस ऑर्किटेक्चर ऑफ मेगालिथिस् ऑफ हजारीबाग पुरातत्व, 2008।
- दास, सुभाशिष, ''द एस्ट्रॉनोमी ऑफ द मेगालिथ ऑफ चानौ, रूपकथा जर्नल ऑन इंटरडिस्पल्निरी स्टडीज इन हयूमिनिटी, वाल्यूम 9, नं0 2, 2017।

- दास, सुभाशिष, ''द स्टनिंग मेगालिथ ऑफ रालो (चानो) एवक्स, 2012।
- दास, सुभाशिष, ''द उड़गड़ी ऑफ झारखंड : अ ब्रिक स्टडी ऑफ द मेगालिथ ऑफ झारखण्ड'', चित्रोलेखा इंटरनेशनल मेंगजिन ऑन आर्ट्स एंड डिजाइन, 2015।
- दास, सुभाशिष, ''अ ब्रिक स्टडी ऑफ कपस् ऑफ फ्यू मेगालिथिक साइट इन झारखण्ड'', चित्रोलेखा इंटरनेशनल मेगजिन ऑन आर्टस् एंड डिजाइन, 2016।
- दास, सुभाशिष, मेगालिथ ऑफ झारखण्ड : अ न्यू प्रिहिस्ट्री इंडिया न्यू दिल्ली, 2014।
- दास, सुभाशिष, सेकेड स्टोन इन इंडियन सिविलाइजेशन नई दिल्ली, 2009।
- देव, एस0वी0 और के0 पदैया, ''द मेगालिथ : दे कल्चर इकॉलॉजी, इकॉनामी एंड टेक्नोलॉजी'', रिसेंट एडवांश इन इण्डिया आर्कामोल्जी, पूना, 1985, पेज 89–99।
- देव, एस0वी0, ''एक्सकेवेशन एट टेक्कलघाट एंड खापा 1968–69'', नागपुर, नागपुर विश्वविद्यालय, 1970।
- देव, एस0वी0, ''द आर्ट एंड कल्चर ऑफ मेगालिथिक मेन'', सांइस टूडे, 1984।
- देवी राधा एवं टी0आर0 भोई, मेगालिथिक आर्ट इन सेन्ट्रल इंडिया'', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ लेटेस्ट रिसर्च इन हयूमेनिटी एंड सोशल साइंस, वाल्यूम 01, पेज 27–31।
- देवी, राधा, ''मेगालिथ कल्चर इन सेन्ट्रल इंडिया इन्साइट फ्राम एथनोग्राफी ट्रेडिशन'', डिपार्टमेन्ट ऑफ हिस्ट्री जम्मू विश्वविद्यालय, 2018।
- चंपक लक्ष्मी, आर0, ''आर्कायोलॉजी एंड तमील लिटररी ट्रेडिशन'', पुरातत्व, 1975, 110–22।
- चक्रवर्ती डी0के0 एवं एन0 लाहिरी, ''द आर्यन एज इन इंडिया'' ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1992।
- चक्रवर्ती, ''स्टडी ऑफ द आयर्न एज इन इंडिया'', पुरातत्व, 1984।

- चाइल्ड, वी0जी0, ''मेगालिथ'' एंशियट इंडिया, 1948।
- चौधरी, पी0सी0 रॉय, बिहार डिस्ट्रीक गजेटियर हजारीबाग, प्रिटेंड बाई द सुपरिटेंडेंट सेक्रेटरियट प्रेस, बिहार, 1957।
- जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल 42 (2), 1873 : 112–119।
- नागराज राव, एम0एस0, ''प्रटो हिस्ट्री कल्चर ऑफ द तुंगभद्रा वेली'', अ रिपोर्ट ऑन हल्लूर एक्सकेवेशन, घाटवार, 1971।
- आल्चिन, एफ0आर0, ''द स्टोन लाइग्नमेंट ऑफ साउदर्न हैदराबाद'', 1956, 133–56।
- आल्चिन, बी0 और एफ0आर0 आल्चिन, ''द राइज ऑफ सिविलाइजेशन इन इंडिया एवं पाकिस्तान'', नई दिल्ली, 1983।
- ओझा, गीता, ''मेगालिथ मान्यूमेंट इन झारखण्ड : एन इंट्रोडक्शन'', मल्टी–डिस्पल्निरी रिसर्च जर्नल सिर्जित, वाल्यूम 2, 2013।
- टोपनो, एम0 ''फ्यूनरल राइट्स ऑफ द मुंडाज ऑफ रॉची प्लेट्यू'', एंथ्रोपोस, 1955, 50 : 715–734।
- अग्रवाल, डी0पी0, ''बॉज एंड आयरन एज इन साउथ इंडिया'', आर्यन बुक्स इंटरनेशनल, न्यू दिल्ली, 2003।
- अग्रवाल, डी0पी0, ''हिस्ट्री एंड आर्कयोलॉजी'', बी0आर0 पब्लिशिंग, वैल्यूम–5, 1979।
- अग्रवाल, डी0पी0, ''द आर्कयोलॉजी ऑफ इंडिया'', लंदन, दिल्ली, 1982।
- गप्ता, एस0पी0, ''वरियल कस्टम इन एंशियट इंडिया'', जर्नल ऑफ द बिहार रिसर्च सोसायटी 46 : 84–116, 1960।
- गॉर्डन, डी0एच0, ''द प्रिहिस्ट्रारिक बैक ग्राउण्ड ऑफ इंडियन कल्चर (न्यू एडिशन), नई दिल्ली मुंशीराम मनोहरलाल पब्लिशर, प्रा0लि0।
- गॉर्डन, पी0आर0टी0, ''द खासी'', लंदन मैकमिलन एंड को0लि0, 1914।

- गुरूराज राव, बी0के0, ''मेगालिथ कल्चर ऑफ साउथ इडिया'', मैसूर, यूनिवर्सिटी ऑफ मैसूर, 1972।
- गुप्ता, एस0पी0, ''डिस्पोजल ऑफ द डेड एंड द फिजिकल टाइपस'', एंशियंट इंडिया, नई दिल्ली, 1972।
- गुप्ता, एस0पी0, ''ट्राइब्स ऑफ छोटानागपुर प्लेट्यू रॉची, 1974।
- गुप्ता, एस0पी0, 1976, ''द असुर एथनो–बायोलॉजिकल प्रोफाइल'', बिहार ट्राईवल वेल्फेयर रिसर्च इंस्टीट्यूट रॉची।
- लाल, बी0बी0, ''फ्रॉम द मेगालिथिक टू द हड़प्पा : ट्रेकिंग बैक द गेफिटी आन द पोटरी'', एंशियट इंडिया, 16, 1960, पेज 4–24।
- लेस्निक, लारेंस एस0, ''अर्ली बरियल फ्राम द नागपुर डिस्ट्रिक सेन्ट्रल इंडिया'', वैल्यूम–5, 1970।

क्रम संख्या .....

BABASAHEB BHIMRAO AMBEDKAR UNIVERSITY
LUCKNOW
प्रज्ञा शील करुणा
ESTABLISHED 1996

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ के 24वें वर्षगांठ पर आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी

10-11 जनवरी, 2020

विषयः राष्ट्र निर्माण में शैक्षिक संस्थानों का योगदान : भविष्यवादी दृष्टिकोण

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री/सुश्री/श्रीमती/डॉ०/प्रो० नीरज कुमार .....

संस्थान का नाम ..... बी॰ बी॰ ए॰ यू॰, लखनऊ .....

..... ने 10-11 जनवरी, 2020

को आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में सहभागिता की तथा ..... इतिहास लेखन द्वारा सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों

का विकास ..... विषय पर शोध-पत्र/वक्तव्य/मुख्य वक्तव्य/अध्यक्षीय वक्तव्य/अतिथि वक्तव्य/संयोजकीय वक्तव्य प्रस्तुत किया।

प्रो. आर.बी. राम
संयोजक

डॉ. बलजीत कुमार श्रीवास्तव
आयोजन सचिव

Curiginal

Document Information

Analyzed document	plagriasm Neeraj Kumar Mphil History.docx (D99562723)
Submitted	3/25/2021 10:17:00 AM
Submitted by	O. P. Saini
Submitter email	gbl.bbau@gmail.com
Analysis address	gbl.bbau.bbau@analysis.urkund.com

Sources included in the report